जौ और उसके सौ उपयोग

लेखक

आयुर्वेदाचार्य पं० गंगा प्रसाद गांगेय

प्रधानाचार्य एवं प्रधान चिकित्सक

भारतीय प्राकृतिक विद्यापीठ एवं चिकित्सालय

सरसई, पो० खागा,

जिला—फतेहपुर

प्रकाशक

तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लिमिटेड

उत्तराधिकारी—नवल किशोर बुकडिपो, लखनऊ

१, त्रिलोकनाथ रोड, लखनऊ—२२६००१

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

तेजकुमार भार्गव द्वारा

तेजकुमार प्रेस (प्रा०) लिमिटेड, लखनऊ में मुद्रित

प्रथम बार ३०००] १९८४

T.K.B.D.
Lko.
Rs. 7-00

दो शब्द

जौ एक सर्वसुपरिचित अनाज है। इधर लगभग २५ वर्षों से अधिक उपज देने वाले विकसित आधुनिक मैक्सिन गेहूँ की जातियों की खेती के कारण यद्यपि जौ की खेती पहले की अपेक्षा बहुत कम हो गई है, तथापि अधिकांश किसान अभी भी थोड़ा-बहुत जौ, विशेषतः ऐसी भूमि में जहाँ सिंचाई की समुचित सुविधा नहीं है, बोते हैं। जौ एक बहुत प्राचीन धान्य है। हवन-क्रिया तो जौ के सिवा अन्य धान्यों से की ही नहीं जाती।

जौ एक औषध-गुण-विशिष्ट उपयोगी धान्य है। बड़ी गवेषणा और परिश्रम से अनेक आयुर्वेदिक ग्रन्थों और चिकित्सा सम्बन्धी पत्रिकाओं से जौ के गुण-धर्मों और प्रयोगों का संकलन कर यह 'जौ और उसके सौ उपयोग' पुस्तक बड़े मनोयोग से प्रणीत की गई है।

आशा है गृह-चिकित्सा से रुचि रखने वाले पाठकों और आयुर्वेदीय चिकित्सा प्रणाली के चिकित्सकों के लिए यह पुस्तक पर्याप्त उपयोगी सिद्ध होगी।

सरसई,
पो० खागा, जिला फतेहपुर
दिनांक : २-१०-८३

गंगा प्रसाद गांगेय

जौ और उसके सौ उपयोग

विषय-सूची

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
	जौ का परिचय, विवरण भेद, विभिन्न भाषाओं में नाम, रासायनिक संगठन, आयुर्वेद मतानुसार गुण-धर्म ।	१-५
	जौ के कुछ विशिष्ट योग	
१.	यवमण्ड	१०
२.	यव कषाय (जव-जल या बार्ली वाटर) ...	११
३.	यवागू	१२
४.	दलिया	१२
५.	सौवीरक (जौ की कांजी)	१३
६.	तुषोदक	१४
७.	यव सत्व (माल्ट) तरल	१५
८.	शुष्क सत्व (Malt)	१७
९.	सत्तू	१७
	सत्तू के गुण धर्म व प्रयोग	१८
१०.	बहुरी	२०
११.	त्र्यूषणाद्य मन्थ	२१
१२.	व्योषाद्य शक्तु	२१
१३.	पंचमुष्टिक यूष	२२
१४.	सप्तमुष्टिक यूष	२३
१५.	अगस्त्य हरीतकी	२३
१६.	यवक्षार या जवाखार ...	२४
	यवक्षार (जवाखार) बनाने की विधि ...	२५
	उदर-विकार	
१७.	अजीर्ण-मन्दाग्नि	२८
१८.	क्षुधा माँ	२८

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
१९.	उदर शूल	२९
२०.	परिणाम शूल	३०
२१.	वातोदर	३०
२२.	मलावरोधज उदावर्त	३१
२३.	उत्तम विरेचन	३१
२४.	समस्त उदर रोग	३२
२५.	अतिसार	३२
२६.	पाण्डु-कामला	३३
२७.	प्लीहा-वृद्धि	३४
२८.	यकृत प्लीहा विकार	३५
२९.	गुल्म और शूल	३५
३०.	विशूचिका (हैजा)	३६
३१.	विशूचिका, अलसक, विलम्बिका	३६
३२.	अम्लपित्त	३७
३३.	पित्तज छर्दि	३८
३४.	अर्श (बवासीर)	३८
३५.	गुदा की सूजन और पीड़ा	३८
	फुफ्फस रोग	
३६.	खाँसी	३८
३७.	श्वास (दमा)	३९
३८.	क्षय	४०
३९.	उरःक्षत और क्षयज कास	४०
४०.	जुकाम, खाँसी, हिचकी	४१
४१.	फुफ्फुस शोथ (ब्रांकाइटिस)	४१
४२.	गले के रोग तथा कांस, श्वास, क्षय	४१
४३.	स्वर भंग (गला बैठना)	४२
४४.	हिक्का (हिचकी)	४२
४५.	श्वास-दमा, हृदय रोग	४३
४६.	अपस्मार, हृदयशूल और पार्श्वशूल	४३
४७.	नकसीर	४३

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
४८.	रक्तपित्त	४३
	मूत्र-रोग	
४९.	मूत्रकृच्छ्र	४४
५०.	मूत्रावरोध-मूत्रनाश	४४
५१.	अश्मरी (पथरी)	४६
५२.	ज्वर (बुखार)	४६
५३.	ज्वर की बेहोशी	४७
५४.	ज्वर-दाह	४७
५५.	दाह (जलन)	४८
५६.	गर्मी, तृषा, दाह तथा रक्तपित्त	४८
५७.	पित्त, कफ, तृषा, मूर्छा भ्रमादि	४९
५८.	ग्रीष्म-प्रकोप से सुरक्षार्थ	४९
५९.	देशज-जल विकार	५०
६०.	प्लेग ग्रन्थि	५०
	पुरुष रोग	
६१.	प्रमेह	५०
६२.	धातु पुष्टि	५१
६३.	बल-पुष्टि	५२
६४.	वाजीकरण योग	५२
६५.	उपदंश-वर्ण	५३
६६.	मधुमेह	५३
६७.	अण्ड वृद्धि	५४
६८.	मूत्रकृच्छ्र, उपदंश, अश्मरी	५५
६९.	पित्त प्रमेह	५५
	नारी रोग	
७०.	नष्टार्तव या ऋतुरोध	५५
७१.	ऋतु शूल, मक्कल शूल	५६
७२.	गर्भ स्थिर रहने के लिए	५६
७३.	गर्भिणी का अतिसार	५६
७४.	शीघ्र सुख प्रसव	५७

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
७५.	मक्कल शूल	५७
७६.	सूतिका रोग	५७
७७.	रक्त गुल्म	५८
७८.	स्तनों की सूजन और कठोरता	५८
	बाल रोग	
७९.	डब्बा, श्वास, कास	५९
८०.	बालक का सूखा रोग	५९
८१.	मेदवृद्धि	६०
८२.	कृशता (दुबलापन)	६०
८३.	शोथ (सूजन)	६१
८४.	गंडमाला	६२
८५.	वातरक्त	६३
८६.	विसर्प	६३
८७.	शीतपित्त (पित्ती उछलना)	६३
८८.	सूखी खुजली	६४
८९.	खुजली, उदर्द, शीतपित्त आदि	६४
९०.	विषम ज्वर नाशक धूप	६४
९१.	विद्रधि या फोड़े फुंसियाँ	६४
	व्रण-दाह, शूल	६४
	फोड़े की सूजन	६५
	फोड़ा पकाने के लिये	६५
९२.	फोड़े को फोड़ना	६५
९३.	रक्तस्राव	६६
९४.	मोच, अस्थि भंग	६६
९५.	अग्नि-दग्ध	६६
९६.	बिच्छू विष	६७
९७.	विपादिका (बिवाईं)	६७
९८.	शरीर-दुर्गन्धि	६७
९९.	व्यंग या झाईं	६७
१००.	मुख कान्ति वर्द्धक योग	६८

—:o:—

जौ और उसके सौ उपयोग

जौ एक सुपरिचित अन्न है। इस समय जौ के मुख्य उपज-केन्द्र स्थान उत्तर भारत, चीन, जापान, तुर्की, रोमानिया और पश्चिमी यूरोप हैं। हिमालय के उत्तर पश्चिम और पूर्व की ओर तेरह हजार फीट की ऊँचाई तक, तिब्बत, कश्मीर, अफगानिस्तान तथा भारत के उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, मध्य प्रदेश आदि उष्ण प्रदेशों तथा यूरोप में भी जौ की खेती होती है। खेतों में यह प्रायः कार्तिक (अक्टूबर) महीने में बोया जाता है और फागुन-चैत (अप्रैल) में फसल पक जाने पर काट लिया जाता है।

भावप्रकाश ग्रंथ में जौ के प्रमुख तीन भेद इस प्रकार बताये गये हैं—(१) यव (सितशूक—सफेद सीकुर वाला)। (२) अतियव (निःशूक, नोक या सीकुर रहित)। इसे मुंडा जौ कहते हैं तथा यव की अपेक्षा न्यून गुण वाला होता है। (३) तोक्य—हरे रंग का सीकुर-रहित छोटा पतला जौ होता है जिसे जई कहते हैं। यह आजकल विशेष रूप से हरे चारे के लिए बोया जाता है। इसके दाने पतले और लम्बे होते

हैं। उत्तर प्रदेश, राजस्थान आदि में इन दिनों जो जौ होता है और खाने के लिए प्रयुक्त होता है, उसी का इस पुस्तक में वर्णन किया जायगा। आधुनिक कृषि-बीज वैज्ञानिकों ने इसी जौ के संस्करण से अम्बर और ज्योति नाम की दो उन्नतिशील जातियाँ निकाली हैं, जो विगत २५-३० वर्षों से उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश आदि में बोई जाती है। भारत के दक्षिण भाग में जौ की खेती नहीं होती। जौ की कुछ उपजातियाँ भी पाई जाती हैं।

संसार में जितने प्रकार के अनाजों की उपज होती है, उनमें जौ अत्यन्त प्राचीन अनादि कालीन धान्य है। आधुनिक विशेषज्ञों ने इसकी २०-२५ जातियों का उल्लेख किया है। भारत में अति प्राचीन-काल से इसके दूसरे नामों की अपेक्षा यव (जव, जौ) के सामान्य नाम का ही अत्यधिक प्रचार होने से प्राचीन वैदिक काल में किस जाति के जौ की विशेष उपज होती थी, इसका निर्णय होना दुस्कर है। अथर्ववेद में इसका उल्लेख इस प्रकार है—'देवाइयं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्याय'। भावार्थ यह है कि इस मधुसंयुत (मधुयुक्त यव-सक्तु) यव को देवताओं ने सरस्वती नदी के तट पर मनुष्यों को

दिया। इसी से आयुर्वेद में प्रमेह या मधुमेह में मधु-युक्त जौ का सत्तू पथ्य रूप में दिया जाता है। उस अनादि काल में इन्द्र हलवाहा या प्रमुख जोतने वाला (सिरपतिः) तथा वरुण किनाशः (कर्षक या किसान) बना था। इस प्रकार की और भी सूक्तियाँ अथर्ववेद में पाई जाती हैं। इस जव की उत्पत्ति अथर्ववेद से भी पहले की जान पड़ती है। इसी से तो कहा है कि इसे इन्द्र और वरुण देवों ने पैदा किया तथा इसीलिए हवनादि वैदिक कर्मों में इसे प्रमुख स्थान (यव मुख्याः) दिया गया है और इसे धान्यराज, दिव्य, पवित्र धान्य की संज्ञायें दी गई हैं।

शूक धान्य वर्ग एवं अपने यव कुल (Gramineae) के सर्व प्रसिद्ध इसके वर्षायु खड़े क्षुप २० से ४० इंच ऊँचे, पत्र पतले, मृदु, रेखादार, नोकदार, मंजरी उपांग सहित ८-१० इंच लम्बी, ¼ इंच चौड़ी, दो पंक्तियों में भंगुर अक्षयुक्त तथा पार्श्वभाग की गौण मंजरी (Spikelets) वृन्तयुक्त, पुंकेशरयुक्त एवं उपांश (Anus) अति खुरदरा ६-१२ इंच ऊँचा होता है।

विभिन्न भाषाओं में जौ के नाम

संस्कृत—यव, शुचि, तीक्ष्ण शूक, निःशूक, अतियव—ये पाँच नाम जौ के हैं।

यवस्तु सितशूकः स्यान्निःशूकोऽतियवः स्मृतः, ।
तोक्यस्तद्वत्सहरितस्ततः स्वल्पश्च कीर्तितः ।।

सफेद शूक (सुई, सीकुर) वाले को यव (जौ) कहते हैं। सीकुर रहित जवों को अतियव कहते हैं। हरे रंग के जौओं को तोक्य कहते हैं और सामान्य यवों को स्वल्प यव कहते हैं।

हिन्दी—जौ।

मराठी—सातुजव।

गुजराती—जव।

बँगला—यव।

अँग्रेजी—बार्ली (Barley)।

लैटिन—होर्डियम हगलर, हो० सिटिह्वम, हो० डेकार्टिकेटम, हो० टेस्टीचियेन, हो० डिस्टिचान।

रासायनिक संगठन—जौ में जल प्रतिशत १२.५, अल्युमिन ११.५, कार्बोहाइड्रेट ७०.००, स्थिर तेल १.३, खनिज द्रव्य २.१, विटामिन बी$_1$ प्रतिशत ग्राम में ४५० मि० ग्रा०, बी$_2$ १२० से २५० मि० ग्रा० तथा ए अल्प परिमाण में, कैल्सियम और फास्फोरस ०.२५ मि० ग्रा०, लोह ३.७ मि० ग्रा० सामान्यतः पाये जाते हैं। इसकी राख में लैक्टिक एसिड ३२.५ तथा कैल्सियम ३.५ पाये जाते हैं।

आयुर्वेद मतानुसार गुण धर्म

भावप्रकाश के मतानुसार—

यवः कषायो मधुरः शीतलो लेखनो मृदुः।
व्रणेषु तिलवत् पथ्यो रूक्षो मेधाग्निवर्द्धनः ।।
कटुपाकोऽनभिष्यन्दी इत्यादि

यव कषाय, मधुर, शीतल, लेखन, मृदु, व्रण रोग में तिल के समान गुणकारी, रूक्ष, मेधावर्द्धक, अग्नि-कारक, पाक में कटु, श्लेष्मा को फैलाने वाले, स्वर को मृदु करने वाले, बलकारी, भारी, कान्ति-वर्द्धक, धातु की समता के रक्षक, बहुत वायु और मल को निकालने वाले और पिच्छिल हैं। यह कण्ठ रोग, त्वचा की पीड़ा, कफ, पित्त, मेदा, पीनस, श्वास, खाँसी, ऊरुस्तम्भ, रक्तदोष और तृष्णा रोग को शान्त करता है। जौ की अपेक्षा अतियव गुणों में न्यून है।

मदनपाल-निघण्टु के अनुसार—

व्रणेषु तिलवत्पथ्यो रूक्षो मेधाग्निवर्द्धनः।
लेखनो बद्धनिस्यन्दः स्वर्यो मेहतृषापहः ।। आदि

घावों में तिलों की तरह पथ्य, रूक्ष, बुद्धि और अग्नि को बढ़ानेवाला, लेखन, मलबंध कर्ता, स्वर को हितकर, प्रमेह और तृषा नाशक है। बहुत वात

और मल उत्पादक, स्थिरता और वर्ण को सुधारता तथा पिच्छिल है। इससे अतियव न्यूनगुणों वाला कहा गया है।

चरक के मतानुसार—

रूक्षः शीतोऽगुरुः स्वादु बहुवातशकृद्यवः।
स्थैर्यकृत्स कषायस्तु बल्यः श्लेष्मविकारनुत्॥

जौ रूखा, शीतल, अगुरु, मधुर रस, वायु तथा पुरीष (मल) को अत्यधिक करने वाला, स्थिरता करने वाला, वयः स्थापक, किंचित् कषाय, बलकारक तथा कफ के रोगों को जीतने वाला है।

'स्वादुः कटुश्च मधुरम्' (वाग्भट सू० अ० ९) के सूत्रानुसार मधुर रस का विपाक मधुर ही होना चाहिए, किन्तु जौ मधुर होने पर भी इसका विपाक कटु होता है। इस वैचित्र्य के निराकरणार्थ ही शायद सुश्रुत ने मधुर के साथ जव को कसैला भी माना है—यवः कषायो मधुरो हिमश्च (सु० सू० अ० ४६) क्योंकि कषाय रस का विपाक प्रायः कटु होता है और कटु विपाकी द्रव्य गुण में लघु होते हैं, न कि गुरु। इसीलिए चरक और वाग्भट स्पष्टतया इसे गुरु न कहते हुए अगुरु कहते हैं—'रूक्षः शीतोऽगुरुः स्वादु' (चरक सू० अ० २७ तथा वाग्भट सू० अ० ६)।

जव एक विचित्र प्रत्ययारब्धी द्रव्य होने से मधुर व शीत होने पर भी गुरु या भारी नहीं है या गुरुत्व इसमें न्यून है—यह दर्शाने के लिए ही 'गुरु' शब्द के पूर्व अकार का प्रयोग सूत्र में किया गया प्रतीत होता है।

विचित्र प्रत्ययारब्धी (Empirical) द्रव्य वे होते हैं, जिनके गुणधर्मों की उपपत्ति या मीमांसा उनके रस, वीर्य, विपाक के द्वारा नहीं बताई जा सकती। जिनके विशिष्ट कर्म या प्रभाव को ही ध्यान में लाना पड़ता है, जैसे जौ व गेहूँ, मछली व दूध गुणों में प्रायः समान होने पर भी विचित्र प्रत्ययारब्धी होने से (आरम्भिक कारण की विचित्रता से ही) जौ वात कारक, कफ, मांस व मेद को घटाने वाला, मल-मूत्र को साफ न करने वाला (आंत्र में वात व मल की वृद्धि करने वाला, मूत्र के प्रमाण को घटाने वाला) तथा प्रमेह व मधुमेह में हितकर है। ये सब इसके गुणधर्म गेहूँ के विपरीत हैं तथा मछली दूध से विपरीत उष्ण वीर्यादि गुण युक्त हैं। वाग्भट सू० अ० ९ तथा चरक सू० अ० २६ में श्लोक ७० से ७४ तक तथा और भी कई उदाहरण इसके दिये गये हैं। केवल भावप्रकाशादि संग्रह ग्रन्थों में इसके

गुणों में 'स्वर्यो बलकरो गुरुः' पाठ दिया गया है। यहाँ पर भी चरक के समान 'अगुरु' शब्द होना युक्ति-युक्त है। यह रूक्ष है तथा इसकी रूखी रोटी खाने से यह चिरपाकी होता है, इसीलिए शायद इसे गुरु माना गया है।

गेहूँ की अपेक्षा जौ में पोषक तत्व कम होता है। इसकी रोटी रुचिकारक, मधुर, लघु है। यह मल, शुक्र, वायु, बलकारी एवं कफ विकारों को दूर करने वाली कुछ संग्राही, उदर में आनाह (अफारा) पैदा करने वाली, वातकारक तथा शरीर में रूक्षता लाने वाली है। जौ की रोटी से अधिक मल उत्पन्न होता है, जैसा कि चरक का कथन है—'यवाः पुरीष-जननानां'। उष्ण प्रकृति एवं स्थूल व्यक्ति के लिए हितकारी है। भाव प्रकाश में जौ की रोटी के सम्बन्ध में लिखा है—

यवरोटिका रुच्या मधुरा विशदा लघु। आदि

जौ की रोटी रुचिकारक, मधुर, विशद और हल्की है। मल-वर्द्धक, वीर्य-वर्द्धक और वायु-वर्द्धक है। बलकारी और कफ रोग नाशक है।

आधुनिक मतानुसार डा० पेरीरा का कथन है कि यद्यपि जौ में गेहूँ जैसी पिच्छिलता (लस-लसापन

Gluten) नहीं है, तथापि गेहूँ के जैसे ही इसमें अधिक प्रमाण में नाइट्रोजन तथा अन्य पोषक तत्वांश हैं। ग्रीस के लोग पहलवानों को आहार रूप में इसे दिया करते थे। सर्व सामान्य उपयोग के लिए देशी जौ यूरोप से निर्यात पर्ल जौ (Pearl or Pot Barley) की अपेक्षा श्रेष्ठ होता है, क्यों कि वह ताजा मिलता है। यह कुछ मृदु सारक होने से आंत्र शैथिल्य से पीड़ित व्यक्ति के उपयोगी नहीं है।

—डा० नाडकर्णी

चरक के छर्दि निग्रहण, स्वेदोपग तथा श्रमहर में जौ का उल्लेख है तथा कास, श्वास, राजयक्ष्मा, उदर रोग, क्षतक्षीण, व्रण, विसर्प आदि के प्रयोगों में इसकी योजना की गई है।

जौ एक अति प्राचीन और औषध-गुण विशिष्ट धान्य है। यह अनेक रोगों की उत्तम महोषधि है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों से संकलित कर तथा अनुभवी आयुर्वेदज्ञों के अनुभूत प्रयोग यहाँ दिये जा रहे हैं। पहले जौ के कुछ विशिष्ट औषध गुण युक्त खाद्य पदार्थों का वर्णन दिया जा रहा है। यहाँ पर पहले यह बता देना आवश्यक है कि अधिक मात्रा में नित्य जौ का भोजन करने से आध्मान, पेट में मरोड़ एवं

वात विकारों की सम्भावना रहती है। इसके हानि निवारणार्थ घी, मक्खन, मिश्री, गर्म मसाला और मस्तगी का सेवन करना चाहिए।

जौ के कुछ विशिष्ट योग

१. यवमण्ड

जौ को कुछ देर पानी में भिगोने के बाद थोड़ा सुखा कर ओखली में डालकर मूसल से कूट कर ऊपरी छिलका निकाल कर, मोटा दल कर चौदह गुने जल में पकावें। पक जाने पर ऊपर का जल नितार कर रोगी को पिलावें। यह शीतल, मूत्रल, रक्त और पित्त संशमन तथा शीघ्रपाकी उत्तम पथ्याहार है। विशेषतः उष्ण एवं पित्त जन्य विकारों में इसका उपयोग लाभकारी है। पित्तज्वर, राजयक्ष्मा, उरःक्षत, शुष्क कास, पित्तज शिरःशूल एवं पार्श्वशूल में यह उपयोगी है।

जौ को उपर्युक्त प्रकार से साफ कर तथा किंचित् भून कर १४ गुने जल में पका कर जो जल तैयार किया जाता है, उसे वाटयमंड कहते हैं। यह भुना हुआ यवमण्ड उक्त यवमण्ड से और भी हल्का तथा कुछ संग्राही होता है। यह कफ-पित्त-प्रकोप नाशक, कण्ठ के लिए हितकारी एवं रक्तपित्त शामक

होता है। अतिसार पीड़ित रोगी के लिए, विशेषतः राजयक्ष्मा व उरःक्षत रोगी के अतिसार के लिए यह उत्तम गुणकारी सुपच आहार है।

२. यव कषाय (जव-जल या बार्ली वाटर)

उपरोक्त रीति से साफ करके दले हुए उत्तम जौ का दलिया या उत्तम विलायती पर्ल जौ ६-७ तोला या इसका मोटा चूर्ण १-२ बड़े चम्मच लेकर पौने दो सेर जल में पका लें तथा आधा जल शेष रहने पर उसे मसल कर छान कर रख लें। इसमें पोषक तत्व ५० प्रतिशत से अधिक होता है। यह कटु पौष्टिक, संकोचक और मूत्रल है। अन्दर की श्लेष्मा कला के लिये यह मृदुकर तथा कंठ और मूत्रमार्ग के विकारों पर लाभदायक और ज्वर के लिए शान्तिदायक पेय होता है। इसमें थोड़ी शक्कर व नींबू का रस मिला देने से उत्तम रुचिकर शान्तिप्रद पेय बन जाता है।

इसे मृदुसारक (सामान्य विरेचक) बनाना हो तो इस बार्लीवाटर में अंजीर के महीन टुकड़े तथा मुनक्का प्रत्येक ६½-६½ तोला व मुलेठी चूर्ण १ तोला ४ माशा और जल ५३ तोले मिलाकर पकावें। चतुर्थांश शेष रहने पर छान लें। इसे अधिक

मृदुकर बनाना हो तो इसमें २½ तोला बबूल का गोंद मिला दें।

३. यवागू

छिलका निकाल कर साफ किये और कुटे हुए ५ तोला जौ को २ सेर पानी में पका कर चौथाई जल रहने पर छान कर उसमें थोड़ी शक्कर मिला पतली दूध जैसी लप्सी बना, शीतल कर, शहद मिलाकर थोड़ी-थोड़ी पिलाते रहने से दाह, बेचैनी, पित्तज्वर या वमन सहित ज्वर आदि लक्षणों से युक्त पित्ताशय के शूल पर बहुत ही गुणकारी है। यह शूल का विकार प्रायः स्त्रियों को अधिक होता है। कभी-कभी यकृत के पित्ताशय में अश्मरी होने पर या पित्त नलिका में अवरोध होने पर बहुत वमन होता एवं यकृत स्थान में भयंकर वेदना होती है। ऐसी अवस्था में यह जौ का यवागू विशेष हितकारी है।

४. दलिया

छिलका निकाल कर साफ किये हुए जवों का दलिया १५-२० तोला लेकर आध सेर पानी में पकायें। चाहें तो पकाने से पहले दलिया को थोड़े घी में कुछ भून लें। भली भाँति पक जाने पर उतार कर ढक दें और १० मिनट बाद थाली में परोस दें।

प्रमेह रोगी के लिए दूध और शक्कर के साथ या मट्ठे के साथ तथा मधुमेह रोगी के लिए मट्ठा और नमक के साथ देना बहुत हितकर है। कफ-पित्त विकार ग्रस्त रोगी के लिए भी यह दलिया उपयोगी है।

५. सौवीरक (जौ की कांजी)

भिगोकर छिलका निकाले हुए जवों को कूट कर आठ गुने पानी में पका कर सन्धान विधि से एक पात्र में भर कर बन्द करके रख दें। किसी द्रव्य या द्रव्यों को जल योग द्वारा कुछ दिनों तक खट्टा होने तक या मद्य की तरह उठान होने तक रख छोड़ना सन्धान कहलाता है। सन्धान की हुई वस्तु लघु, रूक्ष, पाचक और वातनाशक होती है। शरद व गर्मी के दिनों में ६ दिनों तक, बसन्त तथा वर्षा में ८ दिन और हेमन्त व शिशिर में १० दिनों तक रखने से सन्धान सिद्ध होकर जो कांजी तैयार होती है, उसे सौवीर कहते हैं। चरक के मतानुसार—

'यवैः सुनिस्तुषैः पक्वैः सौवीरं सन्धितं भवेत्'—अर्थात् निस्तुष (छिलके रहित) जौ को पका कर सन्धान करने से सौवीर तैयार होता है। भावप्रकाश के अनुसार—'सौवीरं तु युवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुषैः

कृतम्' राज-निघण्टु के अनुसार—'सौवीरकं सुवीराम्लं ज्ञेयं गोधूमसम्भवम् ।' अर्थात् कच्चे या पकाये हुए निस्तुष जौ को सन्धित करने से सौवीर तैयार होता है तथा कई आचार्य यथा राजनिघण्टु में गेहूँ को सन्धित करने से भी सौवीर तैयार होता है—ऐसा कहते हैं ।

सौवीर ग्रहणी, अर्श तथा कफ विकारों में लाभ-दायक होती है। यह मलभेदक, अग्नि प्रदीपक, उदावर्त (गैस बनना), अंगमर्द (हड़फूटन), आनाह (अफारा), शिरो रोग एवं शैथिल्य नाशक है । केशों को हितकारी, बलकारक और संतर्पण है । प्रमेह तथा मधुमेह रोग में हितकर है ।

६. तुषोदक

भावप्रकाश के कथनानुसार—'तुषोदकं यवैरामैः सतुषैः शकलीकृतैः ।' अर्थात् कच्चे सतुष (छिलका युक्त) जौ को अधकुटा करके सन्धित करने से तुषोदक तैयार होता है ।

जौ को छिलका सहित ही कूट कर चौगुने पानी में डालकर मिट्टी के पात्र में भर कर उसका मुख कपड़े से बन्द कर दो । इस सन्धान क्रिया के बाद ४-५ दिन में जब वह अम्ल हो जाय तो कपड़े से

छान कर रख लो । यह 'तुषोदक' कहा जाता है । तुषोदक अग्नि दीपक, हृदय के लिए हितकर, तीक्ष्ण, उष्ण, पाचन, पित्तवर्द्धक एवं पाण्डु, कृमि तथा वस्ति-शूल नाशक है ।

७. यव सत्व (माल्ट) तरल

सत्व या माल्ट प्रवाही तथा शुष्क दो प्रकार का होता है । जव को पहले २४ घण्टे तक हलके गरम पानी में भिगो दें । जल को ६-६ घण्टे पर बदलते रहें । फिर जवों को पानी से निकाल, टाट पर फैला कर ऊपर से गीला कपड़ा ढक कर बार-बार ऊपर से पानी से तर करते रहें । एक-दो दिनों में जवों से अंकुर फूटते ही उन्हें धूप में सुखा कर थोड़े पानी के छींटे देकर मसल कर अंकुरों को निकाल दें, क्योंकि अंकुरों में कुछ कड़ुवापन होता है। फिर अच्छी तरह सुखा कर, मोटा आटा पिसवा कर या जौकुट चूर्ण कर उसकी तौल के समभाग शीतल जल में ६ घण्टे तक भिगो कर फिर उसमें ४ गुना गरम पानी मिला कर १ घण्टे के बाद आग पर पकावें । उफान आने पर उसके पानी को स्वच्छ मोटे कपड़े से छान लें । इस छने हुए पानी के पात्र को गरम पानी में रख मन्दाग्नि से पकाने पर, जब वह छना हुआ पानी

शहद जैसा गाढ़ा हो जाय, तब तुरन्त ही नीचे उतार कर कुछ शीतल होने पर शीशियों में भर मजबूत कार्क से उनका मुख बन्द कर शीतल स्थान पर रख दें। कोई-कोई शीशियों में भरने से पूर्व उसमें यथा-वश्यक शक्कर मिलाते हैं। यह जव का प्रवाही (तरल) घन सत्व है। यह आयुर्वेद के यवमण्ड का ही एक सुधरा हुआ रूप है।

यह प्रवाही सत्व या माल्ट पाचक, पोषक, एवं मृदु सारक है। गेहूँ के सत्व की अपेक्षा यह शीघ्र ही पचता है। इसमें डेक्सट्रीन (Dextrin) तथा यव शर्करा (Maltose or Malt Sugar) की प्रधानता होने से यह आलू, चावल, मक्का आदि स्टार्च प्रधान आहार द्रव्यों को शीघ्र ही पचा देता है। इसे कॉड लीवर आयल जैसी अन्य औषधियों के साथ मिला कर अनुपात रूप में भी दिया जाता है। जीर्ण रोगा-नन्तर शरीर में आई हुई निर्बलता को दूर करने के लिए यह उपयोगी है। अग्निमांद्य, अजीर्ण, कफ एवं पित्तप्रकोप, फुफ्फुस के विकार तथा निर्बलता के लिए यह हितकारी है। मधुमेही को भी इसके उपयोग का परामर्श दिया जाता है। किन्तु मधुमेही को माल्ट न देकर जव के अन्य भोजन देना ही श्रेयस्कर है।

६ माशे से १ तोले तक भोजन के तीन घण्टे बाद लें। अधिक मात्रा में लेने से विरेचन होता है।

८. शुष्क सत्व (Malt)

शुष्क सत्व बनाने के लिए उक्त प्रकार से ही जौ के अंकुर फूटने की क्रिया पूरी होने के बाद उन्हें सुखा कर अंकुरों को दूर कर कड़ाही में मन्दाग्नि पर सेकें। जब वे कुछ लाल हो जायें, तब उतार कर शीतल हो जाने पर महीन पिसवा लें। बस यही परिष्कृत सत्तू ही शुष्क सत्व है। यह पचने में बहुत हल्का और पौष्टिक होता है। इसके साथ पाँच गुना गेहूँ का आटा मिला कर रोटियाँ या गेहूँ का मैदा मिला कर बिस्कुट आदि बनाये जाते हैं, जो उत्तम पौष्टिक होते हैं।

९. सत्तू

जौ, चना भाड़ में भुनवा कर उनका छिलका निकाल कर चक्की में पीस कर सत्तू बनाया जाता है। भारत में बहुत प्राचीन काल से जौ के सत्तू का प्रचलन है। ग्रीष्म ऋतु में उत्तर प्रदेश में सत्तू का बहुत उपयोग किया जाता है। नित्य प्रति खाने के लिए या जलपान में लेने के लिए जो सत्तू बनाया

जाता है, उसमें जौ के साथ कोई-कोई आधा भाग या $\frac{२}{३}$ भाग या $\frac{३}{४}$ भाग चना मिलाते हैं।

सत्तू में रुचि और सुविधा के अनुसार राब, गुड़ या शक्कर अथवा नमक मिला कर उन्हें यथेच्छ जल में घोल कर अच्छी तरह हाथों से मथ कर पीना चाहिए। यह जितना ही पतला होता है, उतना ही तरावट पहुँचाता है और शीघ्र पच जाता है।

सत्तू के गुण धर्म व प्रयोग—

जौ के सत्तू के गुण भावप्रकाश में इस प्रकार कहे गये हैं—

यवजाः शक्तवः शीता दीपना लघवः सरः।
कफपित्तहरा रूक्षा लेखनाश्च प्रकीर्तिताः॥ आदि

जौ का सत्तू शीतल, दीपन, हल्का, दस्तावर, कफ पित्त नाशक, रूक्ष और लेखन है। इसका पीना बलदायक, वृष्य, वृंहण (वीर्य वर्द्धक), भेदक, तृप्तकर्ता, मधुर, रुचिकारी, अन्त में बलनाशक है। यह कफ, पित्त, परिश्रम (थकावट), भूख, प्यास, अण्डवृद्धि, नेत्ररोग का नाश करता है। जो पसीने और दाह से व्याकुल हैं तथा दण्ड व्यायाम से थकित हैं, उनको हितकारी है।

सत्तू उष्ण प्रकृति के लिए संग्राहक, वात प्रकृति

में मृदु रेचक हैं। पूर्वोक्त यवसत्व (माल्ट) या यवमण्ड की अपेक्षा इसमें पोषणांश कम होता है। उष्ण प्रकृति वालों को यह अतिसार की अवस्था में भी लाभकारी है। वात या शीतप्रकृति के लिए यह कुछ अहितकर है।

भुने हुए अन्न से बनने के कारण सत्तू में पोषक तत्व कम होते हैं। देहातों में एक बहुप्रचलित कहावत है—'अन्न न मिले तो सेतुवा खाय'। फिर भी शीघ्र सुगम और सस्ती खाद्य वस्तु होने के कारण उत्तर प्रदेश के गाँवों में सत्तू बहुत बनाया और खाया जाता है।

यथारुचि और सुविधा के अनुसार सत्तू नमक या राब, गुड़, शक्कर के साथ तो खाया ही जाता है, किन्तु उचित पोषण के लिए यदि सूखे सत्तुओं में कुछ शुद्ध ताजा घी डालकर हाथ से मसल कर खूब मिला दिया जाय और उसे दूध में सान कर खाया जाय, तो न केवल वह रुचिकर और सुस्वादु हो जाता है, अपितु अधिक पोषक और शीघ्रपाकी भी हो जाता है।

देहातों के बहुत से लोग सत्तू को रोटी के लिए साने गए आटे से भी अधिक कड़ा सान कर दाँतों से

काट-काट कर खाते हैं और परिश्रमी तथा प्रबल जठराग्नि वाले होने से हजम भी कर लेते हैं। किन्तु दुर्बल पाचन शक्ति वाले लोगों को ऐसा कड़ा सत्तू नहीं खाना चाहिए। सत्तू को काफी पानी में घोल कर शर्बत की भाँति पीने से वह शरीर और पेट में तरावट पहुँचाता और शीघ्र ही हजम हो जाता है। यदि घोल कर पीना रुचिकर न लगे तो इतना पानी मिला कर गीला सानना चाहिए कि वह उँगलियों से अवलेह या लपसी की तरह चाटा जा सके। चरक के कथनानुसार सत्तू को दाँतों से काट-काट कर, बीच-बीच पानी पीते हुए, भोजन के पश्चात्, दो बार, रात में, अधिक मात्रा में, मांस या खीर के साथ और गरम करके नहीं खाना चाहिए।

१०. बहुरी

तुष रहित भुने जौ को धाना (बहुरी) कहते हैं। बहुरी के सम्बन्ध में भाव प्रकाश का कथन है—

'यवास्तु निस्तुषा भृष्टाः स्मृता धाना'.....आदि।

बहुरी दुर्जर (कठिनता से पचने वाली), रूक्ष, तृषा उत्पन्न करने वाली, भारी तथा प्रमेह, कफ और वमन को नष्ट करने वाली होती है।

११. त्र्यूषणाद्य मन्थ

'त्र्यूषणं त्रिफला क्षौद्रं कृमिघ्नं साजमोदकम्।' आदि

त्र्यूषणाद्यमन्थ—त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), त्रिफला (हर्र, बहेरा, आँवला) मधु, वायविडंग, अजवायन, सत्तू इन्हें घृत से युक्त कर अगर की लकड़ी के जल में आलोड़ित करके मन्थ तैयार होता है। इस मन्थ को सन्तर्पण जन्य रोगों (परिश्रमहीन जीवन बिताने और सदैव आराम से बैठे लेटे रहने के कारण प्रमेह, अर्श, कामला, अरुचि, कास, श्वास, ग्रहणी रोग, मेदवृद्धि आदि रोगों) के नाशार्थ पीना चाहिए। त्रिकटु आदि द्रव्यों के समस्त चूर्ण के समपरिमाण मधु तथा घृत और चूर्ण, मधु तथा घृत तीनों के मिलित परिमाण से १६ गुने सत्तू लेने चाहिए। अगर का जल इस प्रकार तैयार करना चाहिए—

२ तोला अगर का जौकुट चूर्ण कर २ सेर जल में पकावें। आधा जल शेष रहने पर उतार कर स्वच्छ वस्त्र से छान लें। इस क्वाथ में उपरोक्त द्रव्यों को घोलकर पीने से सन्तर्पणजन्य रोग नष्ट होते हैं।

१२. व्योषाद्य शक्तु

त्रिकटु, वायविडंग, सहिजन की जड़ का छिलका, त्रिफला, कुटकी, दोनों वृहती अथवा छोटी-बड़ी दोनों

कटेरी, हल्दी, दारुहल्दी, पाठा (पाढ़), अतीस, शालपर्णी, हींग, केऊ की जड़, अजवायन, धनिया, चित्रक, सोंचल नमक, जीरा, हाऊबेर—इन्हें समान भाग ले चूर्ण करें। इस चूर्ण के समभाग में पृथक्-पृथक् तिल तेल, घी तथा मधु और इन सबसे १६ गुने सत्तू लें। इस सत्तू को पीने से सन्तर्पण से उत्पन्न होने वाले प्रमेह, मूढ़वात, कुष्ठ, अर्श, कामला, प्लीहा, पाण्डुरोग, शोथ, मूत्रकृच्छ्र, अरुचि, हृद्रोग, राजयक्ष्मा, कास, श्वास, गलग्रह, कृमि, ग्रहणी के रोग (संग्रहणी आदि), श्वित्र रोग, अतिस्थूलता इत्यादि रोग शान्त हो जाते हैं, अग्नि दीप्त होती है, स्मरणशक्ति और बुद्धि बढ़ती है।

१३. पंचमुष्टिक यूष

जौ का सत्तू या चूर्ण, बेरचूर्ण, कुलथी, मूँग, आँवला ४-४ तोला लेकर जौकुट चूर्ण कर अठगुने पानी में पका कर क्वाथ करें। अष्टमांश जल शेष रहने पर मसल कर छान लें। यह यूष सन्निपातिक ज्वर में पथ्य के रूप में लाभदायक है। कोई-कोई वैद्य आँवला के स्थान में सोंठ लेते हैं। यह भी त्रिदोष नाशक तथा शूल, गुल्म, कास, श्वास तथा क्षय में लाभकारी है।

१४. सप्तमुष्टिक यूष

जौ का सत्तू या जव का चूर्ण, बेर का चूर्ण, कुलथी, मूँग, मूली के महीन टुकड़े, धनिया और सोंठ—इन सात द्रव्यों की एक-एक मुट्ठी (४-४ तोला) एकत्र मिला, १६ गुने जल में पका चतुर्थांश शेष रहने पर मसल कर छान लें। सन्निपात के रोगी को भोजन के स्थान पर इसे ही थोड़ा-थोड़ा पिलावें। यह यूष तीनों दोषों को हरने वाला है। यह यूष ज्वर, आम दोष, आमवात नाशक, कण्ठ, हृदय तथा मुख का शोधक है। कोई-कोई वैद्य इसे गाढ़ी लपसी जैसा बना कर रोगी को थोड़ा-थोड़ा चटाते हैं।

१५. अगस्त्य हरीतकी

१ आढक जौ लेकर उनको जौकुट कर चौगुने जल में औटावें। चौथाई जल शेष रहने पर उतार कर छान-कर रख लें और पके हुए जवों को फेंक दें। फिर दशमूल की औषधियाँ १ सेर, चित्रक, ओंगा, पीपलामूल, कचूर, कौंच बीज, शंखपुष्पी, भारंगी, गजपीपल, खरेंटी की जड़, गाँठदार पोहकर मूल ८-८ तोला इन २० औषधियों को एकत्र कर जौकुट कर ५ आढक जल में औटावें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर उतार कर छान लें। इसको पूर्वोक्त जौ के काढ़े में मिला दें।

फिर इसमें बड़ी हरड़ १०० नग तथा घी और तिलों का तेल ८-८ पल, गुड़ १ तुला भर ले सबको काढ़े में मिला कर पकावें। गाढ़ा हो जाने पर उतार लें। शीतल होने पर पीपल का चूर्ण और शहद दोनों पाव-पाव भर लेकर उस पाक में मिला दें। अगस्त्य ऋषि के कथित इस अवलेह को 'अगस्त्य हरीतकी' कहते हैं। इसमें नित्य प्रातः २ हरड़ अवलेह के साथ खाने से क्षय, खाँसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, बवासीर, अरुचि, पीनस, संग्रहणी आदि रोग दूर होते हैं। शरीर की झुर्रियाँ दूर होतीं तथा सफेद बाल काले हो जाते हैं। बल और कान्ति की वृद्धि होती है। यह अवलेह रसायन है। सम्पूर्ण रोग नाशक है। [१ तुला= १०० पल, १ आढक=५० पल, १ पल=५$\frac{१}{३}$ तोला]

१६. यवक्षार या जवाखार

बाजारों में जवाखार के नाम से कृत्रिम क्षारों का अत्यधिक प्रचार होने से, जौ के पौधों को जला कर असली जवाखार के निर्माण करने की क्रिया बन्द सी हो गई है। प्रायः पोटाश नाइट्रास के घोल में सोडा बाई कार्ब मिलाकर बनाया हुआ जवाखार बाजारों में बहुत पाया जाता है।

जौ के क्षुपों को जलाने से जो राख मिलती है (जिससे क्षार निकाला जाता है) वह राख क्षार की

अपेक्षा अधिक उपयोगी एवं सौम्य होती है। उसमें लेक्टिक, सिलसिक, फास्फटिक, चूना आदि अधिक होते हैं।

यवक्षार (जवाखार) बनाने की विधि

जौ के खेतों में बीज पुष्ट होने के प्रथम ही जब बीज अपरिपक्व दशा में ही हों, उनको उखाड़ कर, एक साफ स्वच्छ गड्ढे में जला कर सफेद राख कर लें। गड्ढे में जलाने से वह अच्छी तरह जल कर सफेद राख विशेष परिमाण में मिलती है। राख के साथ जो काले कोयले हों, उन्हें निकाल दें। राख को १६ गुने पानी में रात को भिगोवें। प्रातः सावधानी से उसका जल नितार लें। उस जल को छान कर कड़ाही में पकावें। पानी जल जाने पर क्षार बन जायगा। तली में नमक के समान जो क्षार जमा हो, उसे खुरच कर निकाल लें। यही यवक्षार (जवाखार) है। यदि क्षार में कुछ कालापन हो, तो उसमें और थोड़ा पानी मिला छान कर पुनः आग पर पका कर क्षार बना लें।

गुण धर्म व प्रयोग—यवक्षार लघु, उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, कटु विपाक (आयुर्वेदानुसार यह स्निग्ध है), अति सूक्ष्म, स्रोतोगामी, दीपन, अतिसौम्य, रुचिवर्द्धक, मूत्रल, स्वेदल, रक्तशोधक, पित्त-क्रिया सुधारक तथा

अम्लपित्त, कफ, कास, श्वास, शूल, वातप्रकोप, आमवृद्धि, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, पाण्डु, कामला, कंठरोग, अर्श, गुल्म, अजीर्ण, ग्रहणी, आनाह, हृद्रोग, उदावर्त, प्लीहा, यकृत के शोथादि विकार नाशक है।

इसे भोजन के २० मिनट पूर्व सुगंधित व तिक्त औषधियों (कालीमिर्च, सोंठ, लौंग, पीपल आदि) के साथ लेने से यह जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। आमाशयान्तर्गत श्लेष्मल कला के शोथादि विकारों को तथा कुपचन, अजीर्णादि विकारों को दूर करता है। भोजन के पश्चात् लेने से परिणाम शूल, अम्लता-वृद्धि, छाती में जलन, ग्रहणी क्षत (Duodenal ulcer) में शान्ति प्राप्त होती है। इसे भोजन के २ या २½ घण्टे बाद लेना चाहिए।

रक्तशुद्धि के लिए इसकी योजना अन्य सुगन्धित द्रव्यों के साथ की जाती है। यह मूत्रपिण्डों को उत्तेजित करता, तदन्तर्गत शोथ को हटाता, मूत्र की मात्रा को बढ़ाता तथा मूत्रदाह को मिटाता है। सुजाक में भी यह हितकारी है। यह त्वचा की स्वेद ग्रन्थियों को उत्तेजित कर पसीना लाता है। अतः ज्वर में पसीना लाने के लिए यह नीम की पत्तियों के रस या नीम की छाल के क्वाथ के साथ दिया जाता है।

यवक्षार श्वसन-संस्थान एवं श्वास नलिका की क्रिया में आवश्यक सुधार कर कफ को पतला करता और श्वास-मार्ग के शोथ को हटाता है। काली खाँसी या सूखी खाँसी में इसीलिए यह घी के साथ चटाया जाता है। फुफ्फुस सम्बन्धी विकारों में क्षार की अपेक्षा राख का उपयोग उत्तम होता है।

पित्तवह स्रोतसों के शोथादि विकारों को यह दूर करता है। पित्त-प्रकोप एवं पित्त विकारों का दमन करता है; अतः यकृत-प्लीहा के शोथादि विकारों में इसकी योजना की जाती है।

क्षार की मात्रा १ या २ रत्ती से १ माशा तक है। रोगानुसार कहीं-कहीं ३ माशा तक भी दिया जा सकता है। अधिक मात्रा में इसके बार-बार प्रयोग से अतिसार, शोथ, फास्फेट्स से बनने वाली अश्मरी एवं वृक्क (गुर्दे) के कई विकार हो जाते हैं। एक ही बार में अत्यधिक प्रमाण में लेने से वमन होने लगता है। इसका अधिक प्रयोग आँत के लिए अहितकर है। इसके हानि निवारणार्थ कतीरा और बबूल का गोंद दिया जाता है।

यवक्षार या जवाखार को संस्कृत में यावशूक, पाक्य और यवाग्रज, गुजराती में जवाखार, अंग्रेजी में

Impure Carbonate of Potash, लैटिन में Potassi Carbonas (पोटाशी कार्बोनस) कहते हैं।

रासायनिक संगठन—जवाखार में मुख्यतः पोटाशियम क्लोराइड ५०.८, पोटाशियम सल्फेट २०.२, पोटाशियम बाई कार्बनेट १२.६ तथा पोटाशियम कार्बोनेट ६.८ प्रतिशत होता है।

उदर-विकार

१७. अजीर्ण-मंदाग्नि

यदि खाई हुई चीजें अच्छी तरह न पचें या हजम न हों, तो उसे अजीर्ण या अग्निमांद्य (मंदाग्नि) कहा जाता है।

(१) हरड़ का चूर्ण जौ के पानी या जौ की कांजी के साथ पीपल और सेंधा नमक मिलाकर खाने से धूम्रयुक्त डकार का प्रबल अजीर्ण दूर होता है।

(२) यवक्षार ४ से ६ रत्ती तक घी के साथ सेवन करने से खट्टी-मीठी दूषित डकारें आना, व्याकुलता, उदरवात, अरुचि आदि लक्षणों सहित अजीर्ण दूर होता है।

१८. क्षुधा मांद्य

अजीर्ण, मन्दाग्नि के कारणों से ही अग्नि मंद होकर भूख नहीं लगती।

(१) यवक्षार के साथ समभाग सोंठ चूर्ण मिला कर खरल कर प्रतिदिन १ माशा चूर्ण प्रातः घी के साथ सेवन करने से क्षुधा प्रबल होती है।

(२) यवक्षार, सेंधा नमक, अजवायन, हरड़, अम्लवेत, वच और घी में भुनी हुई हींग समान भाग ले चूर्ण बनावें। प्रातः सायं १-१ माशा चूर्ण गरम पानी के साथ सेवन करने से मन्दाग्नि नष्ट होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

१९. उदर शूल

पेट में शूल गड़ने जैसी पीड़ा को उदर शूल या पेट दर्द कहते हैं।

(१) जौ का आटा और जवाखार मिलाकर मट्ठे में पका कर गरम-गरम पेट पर लेप करने अथवा स्वेदन करने से उदर पीड़ा शान्त होती है।

(२) २½ तोला गुड़ पानी में पका कर २ माशा जवाखार डालकर पीने से उदर शूल दूर होता है।

(३) जौ, तिल, कुलथी, रेंड़ की जड़ और लहसुन को पीस कर कांजी या मट्ठे में पका कर पेट में सेंक करने से पेट की पीड़ा शान्त होती है।

(४) २½ ग्राम यवक्षार को १० ग्राम कागजी नींबू के रस और २½ ग्राम शहद में मिलाकर (यह

एक ही मात्रा है) देने से एक ही मात्रा में उदर शूल आराम हो जाता है। कुछ कष्ट शेष रहे तो १-१ घंटे के अन्तर से २ मात्रायें और दें।

२०. परिणाम शूल

भोजन के तीन घंटे बाद नित्य नियम से होने वाले उदरशूल को परिणाम शूल कहते हैं। यह शूल विदग्ध पित्त और त्रिदोष विकार से होता है।

जौ के सत्तू को एक सप्ताह तक केवल मटर या मसूर के यूष के साथ पीने से नया या पुराना कैसा भी परिणाम शूल हो, निश्चय ही नष्ट हो जाता है। इसके सेवन काल में अन्य और कोई आहार न लें।

२१. वातोदर

काँख, पसली, पेट, कमर और पीठ में पीड़ा, हाथ-पैर-नाभि और कोख में सूजन, जोड़ों में दर्द, नाभि के नीचे भारीपन, कब्ज, पेट में गुड़गुड़ आदि वातोदर के लक्षण हैं।

जौ का काढ़ा, बेर का काढ़ा, कुलथी का काढ़ा, दही, काँजी प्रत्येक २-२ सेर, तिल तेल २ सेर तथा खरेंटी, पुनर्नवा, मुलहठी, रास्ना, सोंठ, देवदारु, असगन्ध प्रत्येक १¼-१¼ तोला चूर्ण कर—सब द्रव्य कड़ाही में डालकर आग पर पकावो। जब तेल मात्र

शेष रह जाय, तो उतार कर छान लो। इस तेल को ६ माशे की मात्रा में नित्य प्रातः सायं पीने और शरीर तथा पेट में मर्दन करने से वातोदर नाश होता है।

२२. मलावरोधज उदावर्त

कब्ज के कारण पेट में गैस बनना उदावर्त रोग है। इस रोग में रोगी को अफारा हो जाता है, पेट फूलता है और श्वास-प्रश्वास में कष्ट होता है।

(१) जवाखार और मिश्री ५-५ माशे पीस कर जल के साथ पिलाने से मलावरोधज उदावर्त दूर होता है।

(२) यवक्षार, चित्रक, अम्लवेत और हींग को जौकुट कर क्वाथ बनाकर पिलाने से विरेचन होकर उदावर्त नष्ट होता है।

२३. उत्तम विरेचन

यवक्षार ६ माशा, निशोथ, त्रिफला चूर्ण १½-१½ तोला, वायविडंग व कालीमिर्च का चूर्ण—इन सबके मिश्रण में घी, शक्कर या गुड़ मिलाकर ४ से ६ माशे की मात्रा में देने से दस्त साफ हो जाता है। इससे आमाशयान्तर्गत नलिका का तथा वस्ति प्रदेश का शोथ एवं कफवात जन्य अन्यान्य विकार तथा आंत्र-कृमि पर भी लाभ होता है।

२४. समस्त उदर रोग

यवाद्य घृत—जौ, बेर, कुलथी ४-४ तोला लेकर कल्क (लुगदी या चटनी) करें। फिर वृहत् पंचमूल का क्वाथ, सुरा (पकाये हुए चावल अर्थात् भात के सन्धान से तैयार सुरा) और सौवीर (कांजी—जिसकी निर्माण विधि पीछे क्रमांक ५ के प्रयोगों में अंकित है)—ये तीनों सम परिमाण में ६४-६४ तोला मिला कर और गाय का घी ३ सेर—सबको एकत्र मिला मन्दाग्नि से पका कर घृत सिद्ध कर लें। ६ माशे से २ तोले की मात्रा में इस घृत का सेवन करने से अरुचि, मन्दाग्नि, आनाह, कोष्ठबद्धता, उदर शूल, वायुगुल्म, यकृत-प्लीहा विकार आदि समस्त उदर-विकार नष्ट होकर जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

२५. अतिसार

(१) अतिसार रोगी को छिलका रहित साफ जौ के भुने हुए दलिया का यवमण्ड देना बहुत हित-कर है।

(२) जौ और मूँग का यूष सेवन करते रहने से आँत की उष्णता और उग्रता शांत होती है। यह यूष लघु, पाचन तथा संग्राही होने से हर प्रकार के अति-सार में हितकारी है।

(३) यवक्षार, सेंधा नमक, सोंठ और भुना जीरा ५-५ भाग, हरड़ १० भाग इन सबका एकत्र चूर्ण कर १ माशा चूर्ण तक्र या कांजी के साथ देने से अतिसार में बहुत लाभ होता है।

२६. पांडु-कामला

पांडु (पीलिया) कामला रोग में रोगी के नेत्र, सारा शरीर और मूत्र पीला हो जाता है। मुख का स्वाद कड़ुवा, जीभ पर मैल की तह, भूख न लगना, नाड़ी क्षीणता, शरीर में खुजली, सुस्ती आदि इस रोग के उपसर्ग हैं।

यकृत की पित्त-नली में जब पथरी अटक जाती है या किसी कारण पित्त की नली का मार्ग संकीर्ण हो जाने से पित्त आँतों में न पहुँच कर सीधा रक्त में ही मिलने लगता है, तो वह रक्त का स्वाभाविक रंग बदल कर पीला कर देता है।

(१) ३ माशे आँवले के चूर्ण में ४-६ रत्ती यवक्षार मिला कर नित्य प्रातः सायं ताजे जल के साथ सेवन करने से पाण्डु कामला में बहुत लाभ होता है।

(२) बड़ी हरड़ और रोहिड़ा (रोहितक) की छाल के क्वाथ ४ तोला में यवक्षार और छोटी पीपल

का चूर्ण १-१ माशा मिला कर प्रतिदिन प्रातः पीने से आंत्रिक श्लेष्मा कम होकर पित्तमार्ग का अवरोध दूर होकर कामला रोग अच्छा हो जाता है।

२७. प्लीहा वृद्धि

(१) जवाखार ३ माशे गोमूत्र के साथ लेने से प्लीहा वृद्धि नष्ट होती है।

(२) जवाखार, अजवायन, वच, चित्रक मूल छाल, दन्ती सबका चूर्ण ३ से ६ माशे की मात्रा में दही के पानी के साथ सेवन करने से प्लीहा वृद्धि दूर होती है।

(३) जवाखार, नौसादर, कलमीशोरा और फिटकरी सब समान भाग लेकर रिटोर्ट या नलिका-यन्त्र द्वारा अर्क निकाल लें। ५ से १० माशे की मात्रा में यह अर्क चीनी या आधी छटाँक से एक छटाँक पानी में मिलाकर दिन में दो बार पिलाने से प्लीहा-वृद्धि, यकृत दोष, गुल्म, अफारा, अश्मरी (पथरी) आदि में बहुत लाभ होता है। यह दवा दाँत में न लगनी चाहिए; क्योंकि यह एक प्रकार का तेजाब है, दाँतों में लगने से दाँत गिर जाने की आशंका रहती है। पानी में मिलाने से इसका भय नहीं रहता।

(४) जवाखार, त्रिकटु, कूट, सेंधा नमक, भुनी हुई हींग—सबका चूर्ण २-३ माशे की मात्रा में बिजौरा नींबू के रस के साथ देने से प्लीहा-वृद्धि ठीक हो जाती है।

२८. यकृत प्लीहा विकार

(१) तीन माशे जवाखार तक्र या जल के साथ नित्य प्रातः सायं लेने से यकृत विकार दूर होता है।

(२) जवाखार को ऊँटनी के दूध में मिलाकर पिलाने से यकृत और प्लीहा-विकार नष्ट होता है।

(३) यवक्षार और छोटी पीपल का चूर्ण १-१ माशा बड़ी हरड़ और रोहेड़ा (रोहितक) की छाल के क्वाथ ४ तोले में मिलाकर प्रति-दिन प्रातः पीने से यकृत, प्लीहा तथा अन्य उदर-विकार नष्ट होते हैं।

२९. गुल्म और शूल

(१) यवक्षार के साथ समान भाग अजवायन का चूर्ण मिलाकर १-१½ माशे की मात्रा में गरम जल के साथ प्रातः सायं लेने से गुल्म रोग तथा शूल में उत्तम लाभ होता है।

(२) यवक्षार, अजवायन, सेंधा नमक, अम्ल-वेत, हरड़, वच और हींग घी में भुनी—सब समभाग ले चूर्ण बना लें। १-२ माशे चूर्ण गरम जल के साथ

सेवन करने से उपद्रव युक्त बढ़ा हुआ गुल्म तथा वातज शूल भी शीघ्र नष्ट होता है।

(३) यवक्षार, चित्रक, त्रिकटु, नीम की जड़, पाँचों नमक सब समभाग ले चूर्ण बना कर १-२ माशा घी में मिला कर सेवन करने से गुल्म और सब प्रकार के शूल दूर होते हैं।

३०. विशूचिका (हैजा)

निम्नांकित योग केवल अजीर्ण जन्य हैजे के लिए ही उपयोगी है।

२४ तोले जौ का आटा और ५ तोले जवाखार दोनों को छाछ में पका कर सहता-सहता गर्म लेप पेट पर करने से उदरशूल और अजीर्ण जन्य विशूचिका आराम होता है।

३१. विशूचिका, अलसक, विलम्बिका

जिस रोग में पेट बहुत ही अफर जाय, रोगी हाथ-पैर आदि अंगों को पटके और चिल्लाये, पेट की अजीर्ण से रुकी हुई वायु नीचे गुदा मार्ग से न निकल कर छाती और गले की ओर ऊपर को चढ़े, मल और मूत्र बिल्कुल रुक जायँ यानी न दस्त हों न हवा खुले, प्यास लगे, डकारें आवें, वह अलसक रोग है। किया हुआ भोजन न तो वमन द्वारा बाहर निकलता

है, न दस्तों द्वारा नीचे की ही ओर गिरता है और जठराग्नि में पचता भी नहीं, आमाशय में आलसी की भाँति पड़ा रहता, इसी से इस रोग को अलसक कहते हैं।

जिस रोग में किया हुआ भोजन कफ और वात के कारण मुँह या गुदा द्वारा नहीं निकलता, उसे 'विलम्बिका' कहते हैं।

आध पाव जौ का आटा और १ तोला सज्जी या जवाखार को जल में डाल कर पकाओ और गुन-गुना कोख में लेप करो तो विशूचिका, अलसक और विलम्बिका ये सब रोग दूर होते हैं।

३२. अम्लपित्त

अम्लपित्त के रोगी को जौ और गेहूँ का यूष जिसमें मिर्च आदि तीक्ष्ण वस्तु न पड़ी हो, या जौ के सत्तू या जौ का दलिया मिश्री मिला कर खिलाना चाहिए। यदि इनके खाने से भी खट्टी डकारें आवें तो गरम जल पिला कर वमन करा देना चाहिए।

(१) जौ का सत्तू मिश्री के साथ घोल कर पीने से अम्लपित्त आराम होता है।

(२) जौ, अडूसा, आँवला, तज, पत्रज का क्वाथ शहद डाल कर पीने से अम्लपित्त अच्छा होता है।

(३) जौ, परवल के पत्ते और पीपल के काढ़े में शहद मिलाकर पिलाने से अम्लपित्त दूर होता है।

३३. पित्तज छर्दि

जौ, मूँग, मसूर के आटे की लपसी में शहद डाल कर पीने से पित्तज छर्दि दूर होती है।

३४. अर्श (बवासीर)

(१) शुद्ध भिलावे और अजवायन चूर्ण युक्त जौ के सत्तू के साथ मट्ठे का सेवन करने से बादी बवासीर नष्ट हो जाती है।

(२) जौ, धनिया, विडंग, बड़ी कटेरी, असगंध के चूर्ण को घी में मिला कर अर्श के मस्सों पर धुआँ देने से मस्सों की सूजन, खुजली और पीड़ा दूर होती है।

३५. गुदा की सूजन और पीड़ा

जौ का आटा, मसूर का आटा और अण्डे की सफेदी—इन सबको गुलरोगन में मिला कर लेप करने से, किसी भी कारण से उत्पन्न गुदा की सूजन और पीड़ा दूर होती है।

फुफ्फुस रोग

३६. खाँसी

(१) यवक्षार ६ माशा, सोंठ, मिर्च, पीपल तीनों

मिश्रित १ तोला, अनार का कच्चा फल या अनार का छिलका ४ तोला, पुराना अच्छा गुड़ ८ तोला—इन सबको कूट पीस कर १-१ माशे की गोलियाँ बना कर सुखा लें। दिन में कई बार एक-एक गोली मुख में रख कर चूसते रहने से भयंकर खाँसी भी नष्ट होती है। श्वास और क्षय की खाँसी में भी लाभप्रद है। अत्युत्तम अचूक औषधि है।

(२) जवाखार, सुहागा फुलाया हुआ, नौसादर सत्व सब १-१ तोला लेकर पीस कर रख लें। २ रत्ती से १½ माशे तक शहद या अडूसा के स्वरस के साथ सेवन करने से हर प्रकार की भयंकर खाँसी नष्ट होती है।

३७. श्वास (दमा)

(१) भुने हुए जौ शहद मिला कर चबाने से श्वास रोग में बहुत लाभ होता है।

(२) जवाखार और कूट समान भाग ले सिल पर पानी के साथ पीस कर लुगदी बना लो। यह लुगदी खाकर ऊपर से गरम जल पीने से श्वास और हिचकी में अवश्य लाभ होता है।

(३) आक के कोमल पत्तों का रस निकाल कर उस रस में जौ भिगो कर सुखा लो। फिर

जवों को भुनवा कर उनका सत्तू बनवा लो। इस सत्तू को शहद के साथ खाने से श्वास रोग में अत्यन्त लाभ होता है।

३८. क्षय

षडंग यूष—जौ, कुलथी ४-४ तोले, बकरे का उत्तम स्निग्ध मांस १६ तोले—इन सबको अठगुने पानी में पकावें। पकते-पकते चौथाई जल शेष रहने पर उसमें ४ तोला घी गरम कर बघार दें और एक तोला सेंधा नमक तथा अनार और आँवलों का रस डालें। पीपल और सोंठ का कल्क ६-६ रत्ती डालें। इस मांस रस को षडंग यूष कहते हैं। इसे क्षय रोगी को पिलाने से राजयक्ष्मा गत पीनस आदि समस्त विकार निवृत्त हो जाते हैं और रोगी की दुर्बलता दूर होती है।

३९. उरःक्षत और क्षयज कास

शक्ति से अधिक बोझ उठाने, अधिक मैथुन, अत्यधिक परिश्रम, पशुओं से जोर करने, अपने से अधिक बलवान से लड़ने आदि के कारण छाती या फेफड़ों में आघात लगने से उनमें जख्म हो जाते हैं। उस समय खाँसी आने से खून मिला कफ आने लगता है। तब छाती में सुई चुभने जैसी पीड़ा होती है।

(१) उरःक्षत रोगी को जौ, गेहूँ, जीवक, ऋषभक के चूर्ण में समभाग शर्करा मिला कर शहद के साथ चटा कर ऊपर से गरम दूध पिलाना लाभदायक है।

(२) जौ का आटा, गेहूँ का आटा, काकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेदा, महामेदा, जीवक, ऋषभक सबका चूर्ण ६ माशा से १ तोला की मात्रा में शहद और घी विसम भाग मिला कर दूध के साथ पीने से उरःक्षत और क्षय की खाँसी में लाभ होता है।

४०. जुकाम, खाँसी, हिचकी

तेल और घी से मिला हुआ सत्तू का धुआँ पीने से जुकाम, खाँसी और हिचकी में अवश्य लाभ होता है।

जौ, गेहूँ और कुलथी के खाद्य पदार्थों के खाने से कफ मदात्य दूर होता है।

४१. फुफ्फुस शोथ (ब्रांकाइटिस)

यवक्षार ५ रत्ती, लौंग चूर्ण २½ रत्ती, अडूसा के पत्तों का रस १० बूँद (यह एक मात्रा है) पान के रस के साथ देने से ब्रांकाइटिस आराम होता है।

४२. गले के रोग तथा कास, श्वास, क्षय

यवक्षार, चव्य, पाठा, रसौत, दारुहल्दी, छोटी पीपल का चूर्ण शहद में खरल कर चने बराबर

गोलियाँ बना लें। एक गोली मुख में रखकर चूसने से कास, श्वास, क्षय और गले के रोगों में लाभ होता है।

४३. स्वर भंग (गला बैठना)

ठंड लगने से जो स्वर यंत्र में दुर्बलता और विकृति हो जाती है, उसे स्वरभंग, स्वरभेद या गला बैठना कहा जाता है।

सुबह उठते ही २० जौ दाँतों से चबा कर निगल जाने से स्वर भंग ठीक होता है।

४४. हिक्का (हिचकी)

प्राण और उदान वायु कुपित होकर जब बारम्बार ऊपर की ओर जाते हैं, तो हिक्-हिक् शब्द के साथ मुख से जो वायु निकलती है, उसे हिक्का या हिचकी कहते हैं।

(१) बिजौरा नींबू के रस में जौ का सत्तू और सेंधा नमक मिलाकर खाने से हिचकी बन्द होती है।

(२) घी में जवाखार और शहद मिलाकर पीने से हिचकी आराम होती है।

(३) जवाखार, पोहकर मूल और कालीमिर्च का चूर्ण गरम जल के साथ खाने से अत्यन्त बढ़ी हुई हिचकी भी आराम होती है।

४५. श्वास-दमा, हृदय रोग

दशमूल के काढ़े में जवाखार और सेंधा नमक मिलाकर पीने से श्वास रोग, शूल और हृदय रोग आराम हो जाते हैं।

४६. अपस्मार, हृदयशूल और पार्श्वशूल

हींग, धनिया, हरड़, पुष्कर मूल, सेंधा नमक, सौवर्चल और विड नमक के चूर्ण को जौ के क्वाथ के साथ सेवन करने से हृदयशूल, पार्श्वशूल (पसुली की पीड़ा) और अपस्मार रोग दूर होते हैं।

४७. नकसीर

नाक से खून गिरने को नासा रक्तपित्त या नकसीर कहते हैं।

जौ का आटा, धनिया, मुल्तानी मिट्टी, इसबगोल आँवला और गेरू सब समभाग ले जल में पीस कर मस्तक पर लेप करने से नाक से खून गिरना बन्द होता है।

४८. रक्तपित्त

रक्तपित्त रोग में यवमण्ड, बार्लीवाटर, जौ की यवागू, यवसत्व (माल्ट), सत्तू, दलिया आदि जौ के खाद्य पदार्थ बहुत ही हितकर हैं।

यदि कफ के रक्तपित्त में रक्त की गाँठें पड़ गई हों तो जवाखार को थोड़े से घी और शहद में मिला कर चटाना चाहिए।

मूत्र-रोग

४९. मूत्रकृच्छ्र

जिस रोग में अतिकष्ट से पेशाब उतरे, पेशाब करते समय दाह और पीड़ा हो, बूँद-बूँद थोड़ा-थोड़ा पेशाब हो, उसे मूत्रकृच्छ्र रोग कहते हैं।

गोखरू के क्वाथ में जवाखार डालकर पिलाने से मलावरोधज मूत्रकृच्छ्र दूर होता है।

५०. मूत्रावरोध-मूत्रनाश

वस्ति यानी पेशाब की थैली (मूत्राशय) में पेशाब संचित हो किन्तु किसी विशेष कारण से न निकल पाता हो तो उसे 'मूत्रस्तम्भ' या मूत्रावरोध कहते हैं और वस्ति में मूत्र के अभाव को 'मूत्रनाश' कहते हैं।

पेशाब बनाने में जवाखार अक्सीर है।

(१) ४ माशे जवाखार के चूर्ण को मिश्री या खाँड़ में मिला कर शीतल जल के साथ लेने से मूत्रावरोध दूर होता है और मूत्र खुल कर उतरने लगता है।

(२) पेठा और ककड़ी के बीज दोनों को पानी में पीस कर २ माशे जवाखार डाल कर खिलाने के बाद मिश्री का शर्बत पिलाने से रुका हुआ मूत्र उतरने लगता है।

(३) जवाखार, कवाब चीनी और कलमी शोरा ३-३ माशे लेकर चूर्ण बना कर रख लें। यह चूर्ण ३ माशे की मात्रा में गाय के दूध की लस्सी के साथ पीने से रुका हुआ पेशाब उतरता है।

(४) गोखरू के काढ़े में ३ माशे जवाखार डाल कर पिलाने से बहुत पेशाब होता है।

(५) जवाखार और कलमी शोरा समान भाग लेकर एक बर्तन में रख कर आग पर चढ़ायें। जब पानी जैसा तरल हो जाय, तो उसमें थोड़ा सा फिटकरी का चूर्ण डाल दें। चीनी की चाशनी में जिस प्रकार मैल आता है, उसी प्रकार इसमें भी मैल आता है। उसको हटा कर एक चौड़े पात्र में डाल कर फैला कर जमा दें। इसे बहुत से वैद्य 'बज्रक्षार' या 'श्वेत पर्पटी' कहते हैं। इसे पानी या दूध की लस्सी के साथ लेने से बहुत पेशाब पैदा होता है और मूत्रावरोध दूर होता है।

५१. अश्मरी (पथरी)

अश्मरी या पथरी रोग में पेशाब करते समय वेदना होती है, पेशाब रुक-रुक कर होता है। मूत्र के साथ अलब्यूमिन, पीप या कभी-कभी रक्त भी आता है।

पथरी रोग में जौ, गेहूँ, मूँग, चावल, दूध, घी, सेंधा नमक और टिण्डा का शाक पथ्य है।

(१) २ माशे जवाखार गाय के मट्ठे के साथ पिलाने से मूत्रकृच्छ्र और पथरी दोनों रोग आराम होते हैं।

(२) पेठे के रस में जवाखार और भुनी हींग डालकर पिलाने से पथरी और मूत्रकृच्छ्र दूर होते हैं।

(३) १ माशा यवक्षार घी के साथ खा कर दस पाँच मिनट बाद शीतल जल या दूध की लस्सी पीने से मूत्रदाह, मूत्र बूँद-बूँद होना, पथरी आदि दूर होकर मूत्र सरलता से निकलने लगता है।

५२. ज्वर (बुखार)

(१) कच्चे या अधपके जौ (खेत में जो जौ पूर्णतः न पके हों) को शुष्क कर उसके चूर्ण या आटे को दूध में पका कर, उसमें जौ का ही सत्तू, घी, शहद मिला कर तथा दूध और मिला कर पतला कर पीने से ज्वर की दाह शान्त होती है।

(२) जौ, परवल, धनिया तथा मुलहठी का क्वाथ शहद मिलाकर पीने से पित्त ज्वर, दाह एवं भयंकर तृषा शान्त होती है।

५३. ज्वर की बेहोशी

नीलोफर के फूल, खैरू के फूल, छिले कद्दू के बीज प्रत्येक आध-आध पाव तथा जौ की भूसी ३ मुट्ठी—इन सब को पानी में पकाओ। फिर सहने योग्य इस गरम पानी को रोगी के पैरों पर घुटने से नीचे धीरे-धीरे धार बाँध कर डालो और रोगी के पैर ऊपर से नीचे की ओर मलो। साथ ही कपूर और चन्दन घिसकर रोगी को सुँघाते रहो। इस से ज्वर की बेहोशी दूर हो जायगी।

५४. ज्वर-दाह

(१) ज्वर के पश्चात् शरीर में दाह रहने पर जौ का सत्तू पानी में पतला सानकर ज्वर रोगी के सारे शरीर पर लेप करने से दाह-जलन दूर होती है।

(२) प्रह्लाद तैल—८ तोले जौ और २ तोले मजीठ को पीस कर १ सेर तिल तेल और १० सेर जौ की काँजी या तक्र के साथ आग में पका कर तेल सिद्ध कर लो। इस तेल की मालिश करने से ज्वर और दाह शान्त होता है।

५५. दाह (जलन)

तेज धूप लगने, आग के सम्पर्क में अधिक रहने, ज्वर के पश्चात्, शीतला ठीक हो जाने के बाद या किसी अन्य कारण से शरीर में दाह या जलन हो तो—

(१) सौ बार के धोये हुए घी में जौ का सत्तू मिलाकर शरीर पर मलने से दाह शान्त होता है।

(२) जौ के सत्तू, बेर और आँवला पानी में पीस कर शरीर पर लेप करने से जलन दूर होती है।

(३) जौ के सत्तू में मिश्री घोल कर पिलाने से पेट की आन्तरिक जलन और शरीर की वाह्य जलन शांत हो जाती है।

(४) दाह पीड़ित रोगी के शरीर पर जौ के सत्तू पानी में सान कर लेप करना हितकारी है।

५६. गर्मी, तृषा, दाह तथा रक्तपित्त

(१) सत्तू को अधिक जल में घोल कर रख दें। घंटे भर बाद ऊपर के जल को नितार कर उस में मिश्री या शक्कर मिला कर पीने से गर्मी, दाह और तृषा शान्त होती है। पित्तज्वर और रक्तपित्त के रोगी के लिए यह एक उत्तम लाभप्रद शीतलता-प्रदायक रुचिकर पेय है।

(२) यवसक्तु-मंथ—सत्तू को थोड़े घी में मसल कर ठंडे पानी में ऐसा घोलें कि वह न अधिक पतला हो और न गाढ़ा। फिर उसे हाथों या मथानी से भली भाँति मथें, जिसमें सत्तू के बँधे खण्ड न रह जायें। फिर उसमें रुचि के अनुसार अनार का रस, शक्कर, शहद या मिश्री मिला कर पीने से तृषा, दाह और रक्तपित्त में शीघ्र ही उत्तम लाभ होता है। १० तोले तक दिन में दो बार दें। इस योग को तर्पण या संतर्पण भी कहते हैं। यह शीघ्र ही पिपासा, थकावट और दाह को दूर कर बल को बढ़ाता है।

५७. पित्त, कफ, तृषा, मूर्छा, भ्रमादि

जौ के सत्तू में समभाग शक्कर मिलाकर नारियल के जल में घोल कर पीने से पित्त-प्रकोप, कफ-विकार, मूर्छा और भ्रम (चक्कर या घुमरी) आदि व्याधियाँ दूर होती हैं।

५८. ग्रीष्म-प्रकोप से सुरक्षार्थ

सबेरे और तीसरे पहर जौ-चने का सत्तू पानी में घोल कर शक्कर मिलाकर पीने से शरीर में आन्तरिक और बाह्य शीतलता तथा तरी बनी रहती है और गर्मी के प्रकोप से सुरक्षा होती है। राजस्थान में लोग

जौ के आटे को मट्ठा में मिला कर बार्ली की तरह बहुत पतला घोल बनाते हैं। इस घोल को दूसरे दिन बासी होने पर मट्ठा के साथ पीते हैं। यह पेय भी ग्रीष्म-प्रकोप से बचने के लिए उत्तम है।

५९. देशज-जल विकार

अनेक स्थानों में निरन्तर भ्रमण करते समय भिन्न-भिन्न प्रकार का पानी पीने के कारण ज्वर, जुकाम, उदर विकार आदि अनेक दोष उत्पन्न हो जाते हैं। इसके निवारणार्थ यवक्षार और सोंठ समभाग का चूर्ण प्रतिदिन १ माशे की मात्रा में घी के साथ सेवन करना हितकर है।

६०. प्लेग ग्रन्थि

यवक्षार को तिल के तेल में मिला कर पकायें। जब वह लेप योग्य गाढ़ा हो जाय, तब नीचे उतार कर प्लेग की गाँठ पर सुखोष्ण लेप कर ऊपर से पान रखकर बार-बार रुई से सेंक करते रहें। कई बार ऐसा करने से प्लेग की ग्रन्थि बिखर कर बैठ जाती है और कष्ट का निवारण होता है।

पुरुष रोग

६१. प्रमेह

(१) १-१½ तोला जौ रात को पानी में भिगो कर

सबेरे सिल पर महीन पीस कर शहद मिलाकर चाटने से एक माह में प्रमेह ठीक होता है।

(२) जौ को ऊखल में डाल मूसल से कूट कर ऊपर की भूसी निकाल डालें। फिर साफ किये हुए जौ को गोमूत्र में एक घण्टा भिगो कर सुखा लें। इस प्रकार सात दिन तक गोमूत्र में भिगो-भिगो कर सुखाने के बाद फिर सात दिन त्रिफला क्वाथ में भिगो-भिगो कर सुखावें। तत्पश्चात् उन्हें भून कर पीस कर सत्तू के रूप में या रोटी के रूप में सेवन करते रहने से पाचन क्रिया सबल होती, दाह का शमन होता, आम, कफ, उदरकृमि, संगृहीत मल नष्ट होते तथा कफज एवं पित्तज प्रमेह दूर होते हैं।

६२. धातुपुष्टि

(१) २½ तोले जौ को थोड़े पानी में भिगो कर कूट कर छिलका अलग कर दल कर आध सेर गो-दुग्ध में पका कर खीर बना कर नित्य दो मास तक खाने से धातुपुष्टि होती है।

(२) उक्त प्रकार से जवों को साफ कर थोड़ा अधकुटा कर चावल के समान पका कर दूध या घी के साथ सेवन करने से वीर्य की पुष्टि होकर बल की वृद्धि होती, शक्ति का संचार होता तथा दृष्टिमांद्य

दूर होकर तिमिर रोग नष्ट होकर नेत्र ज्योति बढ़ती है।

६३. बल-पुष्टि

यवादि चूर्ण—जौ, असगन्ध, तिल, नागबला, उर्द और गुड़—सब समभाग ले चूर्ण बना लें। इसे प्रातः सायं १-१½ तोले की मात्रा में गोदुग्ध के साथ सेवन करने से शरीर शीघ्र ही हृष्ट-पुष्ट और शक्तिशाली हो जाता है।

६४. वाजीकरण योग

वाजी का अर्थ होता है घोड़ा। जो औषधियाँ घोड़े के समान प्रचण्ड सम्भोग शक्ति उत्पन्न करती हैं, उन्हें वाजीकरण कहा जाता है।

(१) जौ, गेहूँ, उर्द, धान के चावल और पीपल वृक्ष के फल समान भाग के महीन आटे की शुद्ध देशी घी में पका कर पूड़ी बना लें। इस पूड़ी को खाकर ऊपर से दूध बताशा पीने से प्रबल कामशक्ति बढ़ती है।

(२) जौ, गेहूँ और उर्द छिलके रहित समान भाग लेकर बारीक आटा पिसवा लें। फिर ४-४ गुने गोदुग्ध तथा ईख के रस में मन्दाग्नि से पकावें। अच्छा गाढ़ा खोया बन जाने पर उसमें अन्दाज से घी

डाल कर अच्छी तरह भून कर स्वाद योग्य मिश्री का चूर्ण मिला कर मोदक बना लें या मिश्री की चाशनी बना कर पाक जमा दें। अग्निबलानुसार १ तोला से ५ तोला तक की मात्रा में प्रातः सेवन कर ऊपर से मिश्री और पीपल चूर्ण मिला कर पकाया हुआ गो-दुग्ध पियें। इसके सेवन से वीर्य और कामशक्ति की अत्यन्त वृद्धि होती है।

६५. उपदंश-व्रण

जौ और गेहूँ के सत्तू, नीम और रेंड़ी के बीज—सबको पीस कर घी में मिला कर कुछ गरम कर लेप करने से वात जन्य उपदंश के व्रण नष्ट हो जाते हैं।

६६. मधुमेह

चरक का कथन है—'भृष्टान् यवान्न..... सक्तूनि भवन्ति मेहाः'। अर्थात् भुने हुए जौ या सूखे सत्तुओं के योग से तथा मूँग और आँवलों के आहार से प्रमेह, श्वेत कुष्ठ, कफ रोग और मूत्रकृच्छ्र रोग नहीं होते।

जौ कुछ रूक्ष एवं कुछ कसैला होने से तथा इसमें कैलसियम युक्त फास्फोरस, पोटाश आदि तत्व होने से, यह यकृत के द्वारा अग्राह्य शर्करा का

आचूषण करता है। मधुमेही रोगी को जौ के छिलके निकाल कर भून कर व पीस कर सत्तू के रूप में शहद और जल मिला कर या दलिया के रूप में तक्र या गौ के दूध के साथ प्रति दिन थोड़ा-थोड़ा कई बार में (पाचन शक्ति के अनुसार १० तोला से एक पाव या आधा सेर तक) सेवन कराना चाहिए। इसके अतिरिक्त और कोई आहार न दें, दूध तथा घी पर्याप्त दें। पत्तियों वाले हरे शाक तथा आँवले की चटनी दें। फलों में मधुर फल न देकर किंचित् अम्ल फल दें। इस प्रकार पथ्यपूर्वक केवल जौ के ही खाद्य पदार्थों का सेवन करते रहने से, बिना कोई औषधि का सेवन किये ही मधुमेह में आशातीत लाभ होता है। अग्नि संदीपनार्थ एवं मूत्र की सफाई के लिए यवक्षार की थोड़ी मात्रा घी के साथ देते रहें। ध्यान रहे—मधुमेही को जव के सत्व (माल्ट) का सेवन कराना ठीक नहीं है, क्योंकि माल्ट में शर्करा का अंश विशेष आ जाता है।

६७. अण्डवृद्धि

जौ, तिल, पुनर्नवा मूल तथा रेंड़ी के बीज—सब को जौ की काँजी में पीस कर गरम कर गुनगुना लेप करने से अण्डवृद्धि दूर होती है।

६८. मूत्रकृच्छ्र, उपदंश, अश्मरी

यवक्षार, शीतलचीनी, रेवन्द चीनी, छोटी इलायची, जीरा १-१ तोला, कलमी शोरा, शुद्ध हजरुल यहूद पत्थर २ तोला, मिश्री ५ तोला—इनको कूट छानकर महीन चूर्ण करें। १ से ३ माशे तक की मात्रा में दूध की लस्सी या केले के स्तम्भ के जल के साथ लेने से मूत्रकृच्छ्र, उपदंश, अश्मरी में निश्चित रूप से लाभ होता है।

६९. पित्त प्रमेह

जौ और गूलर की छाल का क्वाथ बना कर शहद मिलाकर पीने से पित्त प्रमेह दूर होता है।

नारी रोग

७०. नष्टार्तव या ऋतुरोध

गर्भस्थिति के अतिरिक्त यदि किसी कारणवश ऋतु धर्म होना रुक जाये तो उसे नष्टार्तव या ऋतु-रोध कहते हैं। जवाखार, कड़ुई तुम्बी के बीज, बड़ी पीपल, मैनफल, सुराबीज, पुराना गुड़—इन सबको समान भाग ले पीस छान लें। फिर इस चूर्ण को थूहर के दूध में पीस कर छोटी उँगली के बराबर बत्तियाँ बनाकर छाया में सुखा लें। इनमें से नित्य एक बत्ती

गर्भाशय के मुख में धारण करने से बन्द मासिक धर्म खुल जाता है।

७१. ऋतु शूल, मक्कल शूल

मासिक धर्म के समय वस्ति, गर्भाशय, कमर और शरीर में पीड़ा होना मासिक धर्म की विकृति का लक्षण है। ऐसी अवस्था में—शूलकुठार रस—यवक्षार २ छटांक, मीठा सोडा (सोडा बाई कार्ब) ५ छटांक, करंज की गिरी ३ तोला घी में भुनी हुई, सुहागा भस्म १ छटांक, शुद्ध हींग घी में भुनी २ छटांक—सबको पीस छान कर बोतल में रख लें। १ से २ माशे की मात्रा में गर्म जल के साथ देने से ऋतु शूल, अफरा, मक्कल शूल और कृमिरोग में शीघ्र लाभ होता है।

७२. गर्भ स्थिर रहने के लिए

जौ के आटे या सत्तू के साथ समभाग तिल का चूर्ण और शक्कर मिलाकर नित्य ६-६ माशे की मात्रा में शहद के साथ देते रहने से गर्भपात का भय नहीं रहता।

७३. गर्भिणी का अतिसार

सोंठ और बेलगिरी के काढ़े में जौ का सत्तू मिला कर पिलाने से वमन और अतिसार आराम हो जाते हैं।

७४. शीघ्र सुख प्रसव

जौ की शराब में कलिहारी की जड़ पीस कर प्रसव-वेदना-पीड़ित स्त्री के पैरों के तलुवे पर लेप करने से शीघ्र सुखपूर्वक प्रसव हो जाता है।

७५. मक्कल शूल

सद्यःप्रसूता स्त्री के हृदय और वस्ति (पेडू) में जो पीड़ा होती है, उसे मक्कल शूल कहते हैं।

यवक्षार ४-६ रत्ती की मात्रा में गर्म जल या घृत के साथ पिलाने से प्रसूता के हृदय, मस्तक व वस्ति प्रदेश में होने वाला मक्कल शूल दूर होता है।

७६. सूतिका रोग

(१) जौ, कुलथी, शालि धान की जड़ प्रत्येक ६-६ माशे लेकर गौ के मट्ठे में मिला कर आग पर चढ़ा दें। जब उबल जाय तो उतार कर छान लें और प्रसूता को पिला दें। यह दवा प्रसूता के हर प्रकार के ज्वरों को नष्ट करती है।

(२) यवादि यूष और घृत—जौ, बेर का गूदा, कुलथी तथा शालि धान की जड़ें—२०-२० तोला लेकर सबको कूट कर ८ सेर पानी में पकावें। २ सेर पानी शेष रहने पर छान कर उस में आध सेर घी

तथा ५ तोला जीरा चूर्ण मिला कर फिर पकावें। घृत मात्र शेष रहने पर छान कर रख लें।

उक्त द्रव्यों का मोटा चूर्ण १ तोला १६ तोला जल में पका कर चतुर्थांश या अर्धांश शेष रहने पर छान लें। इस यूष में उपरोक्त घी १ तोला और स्वाद योग्य सेंधा नमक मिला कर उसके साथ शालि या साठी चावलों का भात खाने से सूतिका रोग में निश्चित रूप से लाभ होता है। (वंगसेन)

७७. रक्त गुल्म

(१) यवक्षार, हरड़, सोंचल नमक इन तीनों को पीस कर घी में मिला कर सेवन कराने से रक्त-गुल्म का भेदन होता है और वह गल कर निकल जाता है।

(२) यवक्षार और सेंधा नमक ३-३ माशे, हरड़ और रेंड़ की जड़ की छाल ६-६ माशे—सबको आध सेर जल में औटा कर चतुर्थांश क्वाथ बना कर पिलाने से रक्तगुल्म रोग नष्ट होता है।

७८. स्तनों की सूजन और कठोरता

दूध पीते बच्चे के ठोकर मारने या मर जाने पर स्त्री के स्तनों में दूध जमा हो जाने से स्तनों में सूजन और कठोरता आ जाती है। ऐसी अवस्था में जौ, गेहूँ, मूँग २½-२½ तोले लेकर जल में पीस कर थोड़ा गर्म कर स्तनों पर लेप करने से सूजन और कठोरता दूर हो जाती है।

बाल रोग

७९. डब्बा, श्वास, कास

डब्बा रोग या पसली चलने पर साँस लेते समय बच्चे की पसलियों में गड्ढा पड़ जाता है। बच्चा बड़े कष्ट से साँस लेता है और उसे ज्वर भी रहता है। यह बच्चों का एक प्रकार का निमोनिया है।

यवक्षार, सत्यानाशी के बीज, उसारे रेवन्द, केशर, कटेरी के फूल का जीरा प्रत्येक १-१ तोला, गोरोचन ३ माशे, एलुवा (मुसव्वर) ६ माशे—सबका महीन चूर्ण अदरख के रस में ६ घण्टे घोट कर मूँग के बराबर गोलियाँ बना कर छाया में सुखा लें। आवश्यकतानुसार १ गोली माँ के दूध या शहद के साथ देने से बच्चों का डब्बा रोग, कब्जियत, अफारा, श्वास, कास, पेशाब रुक जाना आदि रोग दूर होकर बच्चा स्वस्थ हो जाता है।

८०. बालक का सूखा रोग

जो बालक पौष्टिक भोजन खाने और जठराग्नि ठीक होने पर भी सूखता चला जाय अथवा जो

बालक निर्बल हो, पर जठराग्नि अत्यन्त तेज हो, सदैव भूख-भूख ही चिल्लाता हो, उसको जौ, गेहूँ और बिदारीकन्द का आटा—तीनों को घी में मिला कर खिलाना चाहिए और ऊपर से शहद तथा मिश्री मिला हुआ दूध पिलाना चाहिए।

८१. मेदवृद्धि

अधिक घी, मलाई, रबड़ी आदि स्निग्ध पदार्थ तथा चावल चीनी आलू आदि कार्बोज युक्त चीजें अधिक खाने और कोई शारीरिक परिश्रम न करने से शरीर में चर्बी बढ़ जाती है, तोंद निकल आती है, शरीर बेडौल हो जाता है और कार्यक्षमता घट जाती है।

(१) चव्य, जीरा, त्रिकटु, भुनी हींग, सोंचल नमक का चूर्ण ६ माशे से १ तोला तक जौ के सत्तू के साथ नित्य खाने से मेदवृद्धि दूर होती है।

(२) जौ, जवाखार, सोंठ, वायविडंग, आँवला, कान्तलौह भस्म—सबका समान भाग चूर्ण नित्य प्रातः सायं शहद के साथ चाटने से मेदवृद्धि कम होती है।

८२. कृशता (दुबलापन)

जिस तरह मेदवृद्धि, स्थूलता या मोटापा शरीर

के लिये अनुचित और अहितकर है, उसी प्रकार कृशता और दुबलापन भी शरीर के लिए अहितकर और अशोभनीय है।

जौ को कुछ देर पानी में भिगो कर और फिर थोड़ा सुखा कर ओखली में डाल मूसल से कूट कर उसका छिलका निकाल कर धूप में सुखा कर दलिया दलवा लें। इस दलिया को भैंस के दूध या स्वस्थ गाय के दूध में डाल कर खीर बना कर खायें। यदि इस खीर में २-२½ तोले से लेकर १ छटाँक तक शुद्ध देशी घी मिला लिया जाय तो और अच्छा है। दो-तीन महीने निरन्तर इस प्रकार जौ की खीर खाने से शरीर की कृशता दूर होकर शरीर हृष्ट-पुष्ट और स्थूल हो जाता है।

८३. शोथ (सूजन)

पांडुरोग, जलोदर, हृदय रोग, यकृत प्लीहा-विकार, चोट आदि शोथ के मुख्य कारण हैं। स्थानिक और सर्वांगिक भेद से सूजन दो प्रकार की होती हैं। सारे शरीर में एक साथ होने को सर्वांगिक शोथ और पैर, पेट, मुख अथवा किसी एक अंग की सूजन को स्थानिक शोथ कहते हैं। शोथ के साथ अरुचि,

प्यास, ज्वरांश, दुर्बलता, त्वचा की शुष्कता, रूक्षता आदि अनेक लक्षण उपस्थित होते हैं।

(१) यदि पित्त दोष से शोथ हो तो जौ के आटे में सिरका और ईसबगोल की भूसी मिला कर लेप करने से और यदि कफ दोष से शोथ हो तो जौ का आटा अंजीर के रस के साथ लगाने से शोथ दूर होता है। पित्त दोष के शोथ का लेप कर्ण शोथ पर भी विशेष लाभकारी है।

(२) जौ का आटा और अमलतास का गूदा २-२ तोला, कपूर २ माशा तीनों को १ तोला अलसी के तेल में खरल कर या अलसी के बीजों के साथ पीसकर गरम कर लेप करने से हर प्रकार की सूजन और पीड़ा दूर होती हैं।

८४. गंडमाला

गले और गर्दन में बेर या आँवलों के समान उत्पन्न होने वाली गाँठों को गलगंड, गंडमाला या कंठमाला कहते हैं। आधुनिक मतानुसार कंठमाला यक्ष्मा का ही एक रूप है।

जौ, मूली के बीज, सन के बीज, सफेद सरसों सहिजन के बीज और अलसी सबको कूट कर खट्टे मट्ठे में पीस कर गंडमाला पर लेप करना बहुत

हितकर है। इसका कुछ दिनों निरन्तर प्रयोग करने से दारुण गंडमाला की गाँठे गल कर नष्ट हो जाती हैं।

८५. वातरक्त

प्रकुपित वात रक्त को दूषित कर वातरक्त उत्पन्न करता है। सर्व प्रथम हाथ पैर में रोग का प्रभाव होता है। सारे शरीर में तीव्र पीड़ा, शोथ, त्वचा की रूक्षता, अँगुलियों की जड़ों में सिकुड़न और दर्द, कम्प, त्वचा में शून्यता, चिलकन, हड्डियों में दर्द, हाथ पैर की धमनियों में खिचाव, अँगुलियों का टेढ़ी हो जाना, हाथ पैर की जकड़न आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं।

जौ का सत्तू, जवाखार और कैथ की छाल को पीस कर घी में मिला कर लेप करते रहने से वातरक्त रोग का शमन होता है।

८६. विसर्प

जौ और मुलेठी का चूर्ण घी में मिला कर लेप करने से विसर्प रोग आराम होता है।

८७. शीतपित्त (पित्ती उछलना)

दूब के रस में हल्दी को खूब महीन पीस कर उसमें जौ का आटा, कूट, पवाँर के बीज पीस कर

तथा थोड़ा सरसों का तेल मिला कर शरीर पर मलने से शीतपित्त आराम होता है।

८८. सूखी खुजली

जौ के आटे में तिल पीसकर या तिल तैल और मट्ठा मिला कर लगाने से सूखी खुजली अच्छी हो जाती है।

८९. खुजली, उदर्द, शीतपित्त आदि

यवक्षार को पानी में घोल कर लेप करने से खुजली, उदर्द, शीतपित्त, विचर्चिका (पामा, एक्जिमा) तथा क्षुद्र कीटों के दंश की पीड़ा, जलन और खुजली दूर होती है।

९०. विषम ज्वर नाशक धूप

गूगुल, नीम के पत्ते, घुड़कच, कूट कड़ुवा, हरड़ का छिलका, सरसों तथा जौ इन सब को कूट कर घी में मिला कर धूप देने से विषम ज्वर नष्ट होता है।

९१. विद्रधि या फोड़े फुंसियाँ

विस्फोट (फोड़ा) में जौ, मूँग, मसूर आदि रूक्ष अन्न हितकर हैं।

व्रण-दाह, शूल

(१) जौ का आटा और मुलेठी का चूर्ण तिल तैल तथा घी में मिला कर गरम कर सुहाता-सुहाता

गरम लेप करने से व्रण का दाह और शूल दूर होता है।

(२) जौ का आटा, शहद, तेल और घी सब को एकत्रित कर गरम कर व्रण पर लेप करने से उसकी सूजन, जलन और पीड़ा दूर होती है।

फोड़े की सूजन

जौ के साथ गेहूँ व मूँग को पीस कर थोड़े पानी में पका कर लेप करने से अपक्व विद्रधि शीघ्र नष्ट होती है।

फोड़ा पकाने के लिए

जौ के सत्तू, तिल, सरसों, सन के बीज, मूली के बीज, लोहे की कीटी, अलसी के बीज ये सब समान भाग ले जल के साथ पीस कर थोड़ा गर्म कर लेप करने से फोड़ा शीघ्र पक जाता है।

९२. फोड़े को फोड़ना

(१) जवाखार और सज्जीखार को जल में मिलाकर पके व्रण पर लेप करने से फोड़ा फूट जाता है।

(२) जौ और गेहूँ का आटा तथा जवाखार एक में मिलाकर लेप करने से शोथ युक्त फोड़ा पक कर फूट जाता है।

९३. रक्तस्राव

कोई अंग चाकू, छुरी आदि से कट-छिल जाने पर जौ और गेहूँ का आटा थोड़े जल में मिलाकर घाव पर लेप करने से खून बहना बन्द हो जाता है।

९४. मोच, अस्थिभंग

लाठी-डंडा आदि की चोट लगने या किसी ऊँचे स्थान से गिर जाने पर शरीर के किसी अंग पर चोट लगने या हड्डी टूट जाने पर जौ के आटे में खुरासानी अजवायन का चूर्ण मिलाकर पानी में पका कर लेप करने से चोट का दर्द और हड्डी के टूटने की पीड़ा दूर होती है।

९५. अग्नि-दग्ध

(१) जवों को जला कर राख करके उसे तिल के तेल में मिलाकर जले हुए स्थान पर लेप करने से जलने का घाव शीघ्र ही अच्छा हो जाता है।

(२) जौ के सत्तू को तिल तेल में मिलाकर लेप करने से जले की जलन मिटती और घाव सूख जाता है।

ध्यान रहे कि अग्नि-दग्ध व्रण को ठंडे पानी के स्पर्श से बचायें।

९६. बिच्छू विष

जौ का आटा और पोदीना दोनों को तुलसी की पत्तियों के रस में पीस कर लगाने से बिच्छू का जहर उतर जाता है।

९७. विपादिका (बिवाईं)

बहुत से देहाती लोगों के पैरों की त्वचा, विशेष कर जाड़ों में फट कर दरार हो जाती है, इसे संस्कृत में विपादिका और बोल-चाल की भाषा में बिवाईं कहते हैं।

जवाखार और धतूरे के बीज कड़ुवे तेल में पका कर बिवाईं में लगाने से बिवाईं ठीक हो जाती है।

९८. शरीर-दुर्गन्धि

बहुत से लोगों के शरीर से विशेष कर मेदस्वी पुरुषों की देह से दुर्गन्धि आती है।

जौ का भुना आटा या जौ के सत्तू, कुलथी, कूट, बालछड़, छरीला, चन्दन, तज और वच को पानी के साथ महीन पीस कर शरीर पर मर्दन करने से दुर्गन्धि दूर होती है।

९९. व्यंग या झाईं

मुख पर जो पीड़ा-रहित पतले काले दाग हो जाते हैं, उसे व्यंग या झाईं कहते हैं।

जौ, चना, मसूर, मटर, चावल सब सम भाग ले जल के साथ सिल पर महीन पीस कर उबटन बना कर मलने से मुख की कील-झाइयाँ दूर होकर मुख की कान्ति मनोहर हो जाती है।

उक्त अनाजों में किसी एक, दो या तीन का भी उबटन बना कर प्रयोग किया जा सकता है।

१००. मुख कान्ति वर्द्धक योग

रेवन्द चीनी, मालकाँगनी, रीठे का छिलका, कायफल, हल्दी प्रत्येक का चूर्ण १-१ तोला, जौ का आटा १२ तोला—सबको एक में मिलाकर रख लें। इसमें से थोड़ा सा चूर्ण लेकर जल और सरसों का तेल मिलाकर मुख पर लेप करें। आध घण्टे बाद उबटन की भाँति मल-मल कर इस लेप को उतार डालें और मुँह को धो डालें। कुछ दिनों तक इसी प्रकार इस उबटन का प्रयोग करने से मुख की झाइयाँ, दाग, मुँहासे दूर होकर रंग निखर कर मुख की कान्ति बढ़ जाती है।

—:o:—

तेजकुमार भार्गव द्वारा तेजकुमार-प्रेस (प्रा०) लिमिटेड, लखनऊ में मुद्रित।

❀ स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें ❀

हड़ और उसके सौ उपयोग	...	४) ५० पै०
जामुन और उसके सौ उपयोग	...	३) ६० पै०
अदरक, सोंठ, हल्दी, पीपल	...	२)
अंगूर, अनार, सेब, संतरा	...	२)
मांस व अंडे के गुण दोष	...	२)
पपीता, केला, अमरूद, शरीफा	...	२) ५० पै०
अमृतफल आँवला	...	२)
चाय के गुण और दोष	...	२)
डाक्टर दूध	...	२)
डाक्टर तुलसी	...	२)
डाक्टर आम	...	२)
डाक्टर गन्ना	...	२)
डाक्टर जल	...	२)
डाक्टर त्रिफला	...	२)
डाक्टर गेहूँ और डाक्टर चना	...	२)
डाक्टर शहद	...	२)
डाक्टर बेल	...	२)
दाल	...	२) ५० पै०
प्याज के उपयोग	...	२)
दूध और दूध से बनी चीजें	...	२) ५० पै०
नमक के गुण और दोष	...	२)
टमाटर, करैला, बैंगन, परवल	...	२)
नीम और उसके सौ उपयोग	...	२)
नींबू और उसके सौ उपयोग	...	२)
मिट्टी चिकित्सा	...	२)
मूली, गाजर, शलजम, चुकन्दर	...	२) ५० पै०
सूखे मेवे	...	२)
सोयाबीन	...	२)
तम्बाकू के गुण और दोष	...	२)

तेजकुमार बुकडिपो (प्रा०) लिमिटेड,

पोस्ट बाक्स ८५, १-त्रिलोकनाथ रोड, लखनऊ—२२६००१